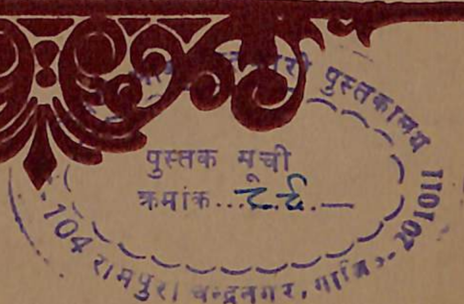
संस्कृत-विहारः

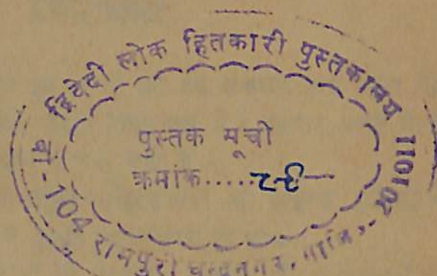


नरोत्तमदास स्वामी, एम. ए.

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा

मूल्य : रु. २·६५

संस्कृत-विहारः



संपादक
नरोत्तमदास स्वामी
एम. ए. (संस्कृत-हिन्दी)

भारत सरकार द्वारा उपलब्ध किये गये
रियायती मूल्य के कागज पर मुद्रित

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा

पुनर्मुद्रण : १९८२
पुनर्मुद्रण : १९८३

मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा

प्रस्तावना

संस्कृत-साहित्य के चुने हुए अंशों का यह संकलन हाई स्कूल एवं तत्समकक्ष परीक्षाओं के लिए तैयार किया गया है। संकलन करने में दो बातों को विशेष रूप से ध्यान में रखा गया है—

१. संस्कृत-साहित्य के प्रमुख साहित्यकारों की उत्कृष्ट कृतियों के उत्कृष्ट और रोचक अंशों से छात्रों का परिचय हो जाय।

२. संकलित अंश ऐसे हों जो भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठताओं को हृदयंगम करने में और चरित्र-निर्माण में सहायक हों।

प्रथम उद्देश्य की पूर्ति के लिए रामायण, महाभारत जैसे आर्ष ग्रन्थों, कालिदास, भास, अश्वघोष, दण्डी, बाण, भवभूति, जयदेव जैसे ख्यातनामा लेखकों की रचनाओं; तथा कथासरित्सागर, पञ्चतन्त्र, हितोपदेश, भोज-प्रबन्ध, सिंहासन-द्वात्रिंशिका और पुरुष-परीक्षा जैसी लोकप्रिय कृतियों के चुने हुए अंश संकलित किये गये हैं। उपयुक्त सरल अंशों के अभाव तथा स्थान की कमी के कारण भारवि, माघ, श्रीहर्ष आदि कई-एक श्रेष्ठ साहित्यकारों को स्थान नहीं दिया जा सका।

ब्राह्मण और उपनिषद्-साहित्य की एक झलक के रूप में ऐतरेय ब्राह्मण और तैत्तिरीयोपनिषद् के दो सरल अंश भी संगृहीत किये गये हैं।

जैन विद्वानों ने संस्कृत-साहित्य की बहुत बड़ी सेवा की है। पाठ्य ग्रन्थों में उनकी ओर उदासीनता दिखायी जाती रही है। इस पुस्तक में हरिषेण के बृहत्कथाकोष के एक अंश का संकलन करके इस त्रुटि का किसी अंश में परिहार करने का प्रयत्न किया गया है। सिंहासन-द्वात्रिंशिका वाला अंश भी क्षेमंकर के जैन रूपान्तर के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। महाकवि अश्वघोष बौद्ध संस्कृत-साहित्य का प्रतिनिधित्व करते हैं।

पाठों का पूर्वापर-क्रम कठिनता की मात्रा के अनुसार रखा गया है, कठिनता की मात्रा क्रमशः बढ़ती गयी है। प्रत्येक पाठ के आरम्भ में मूल

ग्रन्थ और उसके लेखक का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। आशा की जाती है कि इससे विद्यार्थियों का कौतूहल जागृत होगा और वे इस सम्बन्ध में और भी जानने और पढ़ने को तत्पर होंगे। उनकी सहायता के लिए विशेष पठन की सामग्री का निर्देश पाठों के अन्त में किया गया है।

पाठों के साथ अभ्यास दिये गये हैं जिनमें पाठ के विषय, शब्दकोष, व्याकरण तथा रचना से सम्बन्ध रखने वाले प्रश्न वर्गीकृत करके दिये गये हैं। परिशिष्ट में अर्थ-सम्बन्धी तथा दूसरी कठिनाइयों को दूर करने वाली टिप्पणियाँ दी गयी हैं।

आशा है, यह संकलन जिनके लिए तैयार किया गया है उनके लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

— संकलनकार

सूचिका

अवतरणिका

कवि-प्रशंसा-पद्यानि

(१) वाल्मीकि—

कवीन्दुं नौमि वाल्मीकिं यस्य रामायणीं कथाम् ।
चन्द्रिकामिव चिन्वन्ति चकोरा इव साधवः ॥

(२) व्यास—

नमः सर्व-विदे तस्मै व्यासाय कवि-वेधसे ।
चक्रे पुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम् ॥

महाभारत—

धर्मे ह्यर्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ ! ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित् ॥

(३) भास और कालिदास—

भासो हासः कवि-कुल-गुरुः कालिदासो विलासः ।
केषां नैषा कथय कविता-कामिनी कौतुकाय ॥

(४) कालिदास—

पुरा कवीनां गणना-प्रसंगे कनिष्ठिकाधिष्ठित-कालिदासा ।
अद्यापि तत्तुल्य-कवेरभावाद् 'अनामिका' सार्थवती बभूव ॥

अभिज्ञान-शाकुन्तलम्—

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला ॥

(५) दण्डी—

कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः ॥
जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाभवत् ।
कवी इति ततो व्यासे कवयस् त्वयि दण्डिनि ॥

(६) बाण—

प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी बाणो बभूवेति ॥

कादम्बरी—

कादम्बरी-रस-भरेण समस्त एव मत्तो न किंचिदपि चेतयते जनोऽयम् ।

(७) कालिदास-भारवि-दण्डि-माघ—

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थ - गौरवम् ।
दण्डिनः पद-लालित्यं माघ सन्ति त्रयो गुणाः ॥

(८) भवभूति—

भवभूतेः संबन्धाद् भूधर-भूरेव भारती भात ।
एतत्कृत-कारुण्ये किमन्यथा रोदिति ग्रावा ॥

उत्तररामचरितम्—

उत्तरे राम-चरिते भवभूतिर् विशिष्यते ॥

१४ विद्या

चतुर्वेदा। षडङ्गानि मीमांसा न्याय इत्यपि ।
धर्म-शास्त्रं पुराणं च प्रोक्ता विद्याश् चतुर्दश ॥

६ वेदाङ्ग

छन्दः पादौ, करौ कल्पः, निरुक्त श्रोत्रमुच्यते ।
ज्यौतिषं लोचने, शिक्षा घ्राणं, व्याकरणं मुखम् ॥

६ शास्त्र

न्यायो वैशेषिकं चैव साङ्ख्यं योगस् तथैव च ।
मीमांसा चैव वेदान्त एतानि दर्शनानि षट् ॥

विशेष पठन के लिए ग्रन्थ तथा निर्देश-ग्रन्थ

१. बलदेव उपाध्याय : संस्कृत साहित्य का इतिहास (शारदा मन्दिर, वाराणासी)
२. बलदेव उपाध्याय : संस्कृत वाङ्गमय (वही)
३. नरोत्तमदास स्वामी : नवीन संस्कृत व्याकरण (रमेश बुक डिपो, जयपुर)
४. रूपचन्द्रिका : (चौखम्भा संस्कृत सीरीज, वाराणसी)
५. अमरकोष, मणिप्रभा टीका (चौखम्भा)
६. संस्कृत-अंग्रेजी-हिन्दी प्रैक्टिकल डिक्शनरी (रामनारायणलाल, इलाहाबाद)

: १ :

मङ्गलम्

(१)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देव-देव ! ॥

(२)

यं शैवाः समुपासते शिव इति, ब्रह्मेति वेदान्तिनो
बौद्धा बुद्ध इति, प्रमाण-पटवः कर्तेति नैयायिकाः ।
अर्हन्नित्यथ जैन-शासन-रताः कर्मेति मीमांसकाः
सोऽयनो विदधातु वाञ्छित-फलं त्रैलोक्य-नाथो हरिः ॥

अभ्यास

(१) शब्द-कोष-सम्बन्धी

(१) निम्नलिखित शब्दों के अर्थ लिखो और उनके पर्याय-शब्द, जितने बता सको, उतने बताओ—
द्रविण, पटु, विदधातु, वाञ्छित ।

(१) हरि शब्द के जितने अर्थ जानते हो उन सबको बताओ ।

(२) व्याकरण-सम्बन्धी

(१) संधि-विच्छेद करो—
बन्धुश्च, शिव इति, ब्रह्मेति, अर्हन्नित्यथ, सोऽयम् ।

(२) समास-विग्रह करो और समास का नाम बताओ—
देव-देव, प्रमाण-पटवः, वाञ्छित-फलं, त्रैलोक्य-नाथः ।

(३) प्रकृति-प्रत्यय अलग-अलग बताओ—
शैवाः, वेदान्तिनः, वाञ्छित ।

(४) उपसर्ग, धातु और तिङन्त प्रत्ययों को अलग-अलग बताओ—
समुपासते, विदधातु ।

(३) रचना-सम्बन्धी

(१) प्रथम श्लोक के मुख्य भाव को संक्षेप में संस्कृत में लिखो ।

(४) विषय-सम्बन्धी

(१) द्वितीय श्लोक का केन्द्रीय भाव क्या है ?
(२) जिन और बुद्ध कौन थे ?
(३) द्वितीय श्लोक में तीन शब्दों का उल्लेख हुआ है, छहों दर्शनों के नाम बताओ ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. सूक्ति-सुधाकर—(गीता प्रेस, गोरखपुर)

: २ :

शालिवाहन-कथा

(सिंहासन-द्वात्रिंशिकायाः)

[भारत के राजाओं में उज्जयिनी के नरेश विक्रमादित्य ने लोक-मानस को सबसे अधिक मुग्ध किया। उसके सम्बन्ध में सैकड़ों कथाएँ जनता में प्रसिद्ध हुईं, जिनमें उसके महान् त्याग, अपूर्व औदार्य और अद्भुत शौर्य के नानारंगी चित्र अंकित हुए हैं। इन कथाओं के संग्रह समय-समय पर लेखबद्ध हुए। ऐसे संग्रहों में विक्रम-चरित्र, पञ्चदण्ड-चरित्र, वेताल-पञ्चविंशतिका और सिंहासन-द्वात्रिंशिका विशेष प्रसिद्ध हैं। संस्कृत के अतिरिक्त प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, गुजराती, हिन्दी आदि भाषाओं में इनके विविध रूपान्तर बने और लोकप्रिय हुए।

सिंहासन-द्वात्रिंशिका में विक्रमादित्य के अद्भुत त्याग और पराक्रम की ३२ कथाएँ संकलित हैं। धारा के अधिपति भोज को एक बार पृथ्वी में गड़ा हुआ विक्रमादित्य का सिंहासन मिला। उसे साफ करवाकर जब वह उस पर बैठने लगा तो सिंहासन की पहली पुतली ने उसे रोका और कहा कि इस सिंहासन पर वही व्यक्ति बैठ सकता है जिसमें विक्रमादित्य जैसा अद्भुत त्याग और पराक्रम हो। यह कहकर उसने विक्रमादित्य के महान् त्याग की एक कथा सुनायी। दूसरे दिन दूसरी पुतली ने दूसरी कथा सुनायी। इस प्रकार बत्तीस दिनों तक बत्तीस पुतलियों ने कथा सुनाकर भोज को सिंहासन पर बैठने से रोका। अन्त में राजा भोज ने सिंहासन को वहीं गड़वा दिया जहाँ वह मिला था।

संकलित अंश सिंहासन-द्वात्रिंशिका की २४वीं कथा से लिया गया है। इसमें विक्रमादित्य के प्रतिद्वन्द्वी शालिवाहन के बचपन की एक कथा है, जिससे बालक शालिवाहन की बुद्धिमत्ता का अच्छा परिचय मिलता है।]

आसीत् श्रीमन्नृपति-विक्रमादित्यस्य राज्ये पुरन्दरपुरं नाम नगरम् । तत्र कश्चिन्महा-धनिकः श्रेष्ठी न्यवसत् । स च कोटि-ध्वजः। तस्य चत्वारः पुत्रा आसन् । अन्यदा तेन देहावसान-समये पुत्राः प्रोक्ताः—भो वत्साः ! युष्माभिः संभूय स्थेयम् । यदि स्थातुं न पारयेत तदा मदीय-शयन-स्थाने मञ्चाधस्ताद् युष्मन्नामाङ्किताश् चत्वारः कलशाः सन्ति ते प्रत्येकं ग्राह्याः । तेन क्रमण च सम्पत्ति-विभाजनं कृत्वा सुखिनो भवेत् ।

ततस्तस्मिन् पर-लोकं गते चत्वारो भ्रातरो मासमेकमेकत्र स्थिताः । ततस्तेषां स्त्रीणां परस्परं कलहो जातः । ततस्तैर्विचारितम्—किमर्थं कलहः क्रियते ? पित्रा जीवतैव चतुर्णां विभागः कृतोऽस्ति । तन् मञ्चाधःस्थितान् विभागान् गृहीत्वा विभवताः सन्तः सुखेन तिष्ठाम । इत्युक्त्वा यावन्मञ्चाधः खनन्ति तावच् चतुर्णां पादानामधस्ताच् चत्वारः कलशा दृष्टाः । तेषां मध्ये एकस्मिन् मृत्तिका द्वितीयेऽङ्गारास् तृतीयेऽस्थीनि चतुर्थे तु तुषाः स्थिताः ।

एवमेतत् कलश-चतुष्टयं दृष्ट्वा ते चत्वारो भ्रातरो विस्मयं गताः परस्परमवदन्—अहो ! अस्मत्-पितृ-कृत-विभागस्य परमार्थः केन ज्ञायते ? ततस्तैर्बहवो लोकाः पृष्टाः । पर कोऽपि परमार्थं न जानाति । अन्यदा राज-सभायां गत्वा सर्वो वृत्तान्तो निवेदितः । परं तत्रापि निर्णयो न जातः ।

तदनन्तरमेकदा ते प्रतिष्ठानपुरं गताः । तत्र तत्रत्यानां महाजनानां पुरतस् तद्-वृत्तान्तो भणितः । तत्रापि न केनापि निर्णयः कृतः ।

अथ तस्मिन् नगरे शालिवाहनो नाम कश्चित् कुमारो मात्रा

सह कुम्भकार-गृहे तिष्ठति स्मः स तद्विवाद-स्वरूपं श्रुत्वा महा-जन-सभायामागत्य प्राह—भो! सभ्याः ! को वादः ? किमत्र दुर्बोधम् ? किमाश्चर्यं च ? तत्कथयत। तदाकर्ण्य तेषामेकोऽवदत्—एते चत्वारः कस्यापि धनिकस्य पुत्राः, एतेषां पित्रा जीवता एव विभागः कृतो यथा एकस्मिन् कलशे मृत्तिकाः अन्यस्मिन्नङ्गाराः, अपरस्मिन्नस्थीनि चतुर्थे तु तुषाः। अस्य विभागस्य निर्णयं कर्तुं कोऽपि न शशाक।

तच्छ्रुत्वा शालिवाहन उवाच—एतद्वादस्य निर्णयमहं करिष्ये। तदा सर्वे साश्चर्यं विलोकमानाः स्थिताः। स प्राह—यस्य पित्रा मृत्तिका दत्ता तस्य सर्वा भूमिः, यस्य तुषा दत्तास्तस्य सकलं धान्यम्, यस्यास्थीनि तस्य सर्वे चतुष्पदादि -पशवः, यस्य चाङ्गारा दत्तास्तस्य सुवर्णादयः सप्त धातवः। एवं शालिवाहनेन तेषां पितृ-कृत-विभागस्य तात्पर्यं वर्णितम्।

एतदाकर्ण्य सर्वे प्रमुदिताः। शान्तो विवादः। तेऽपि धनिक-कुमाराः कृतार्थाः स्व-गृहं गताः।

अभ्यास

(१)

(१) **निम्नलिखित शब्दों के अर्थ बताओ—**
देहावसान, संभूय, पारयेत, परमार्थ, मात्रा, महाजन, सभ्या, कर्ण्य, वाद।

(२) **कहना अर्थ की वाचक जितनी धातुएँ जानते हो उनको बताओ।**

(२)

(१) **संधि-विच्छेद करो—**
ततस्तस्मिन् तैर्विचारितम्, कलहो जातः, कोऽपि, जीवतैव,

(२) समास-विग्रह करो—
देहावसान-समये, परमार्थः, कुम्भकार-गृहे, सुवर्णादयः।
(३) उपसर्ग, धातु तथा प्रत्ययों को अलग-अलग करके बताओ—
न्यवसन्, संभूय, स्थेयम्, स्थातुं, जीवता, विलोकमानाः।
(४) जाति (लिंग), वचन तथा विभक्ति बताओ—
चत्वारः, मासम्, धातवः, ते।
(५) ये रूप किस धातु के और किस काल के हैं—
आसन्, कथय, शशाक।

(३)

(१) वाच्य-परिवर्तन करो—
वादस्य निर्णयमहं करिष्ये; शालिवाहनेन तात्पर्यं वर्णितम्, तदाकर्ण्य तेषामेकोऽवदत्; परमार्थः केन ज्ञायते।
(२) वाद को सुनकर शालिवाहन ने जो कहा उसे संस्कृत में लिखो।

(४)

(१) विक्रमादित्य और शालिवाहन के विषय में क्या जानते हो ?
(२) ऐसी ही कोई और कथा लिखो (जैसे बालक चन्द्रगुप्त की कथा)।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१ जीवानन्द—द्वात्रिंशत्-पुत्तलिका-सिंहासनम्।
२. क्षेमंकर—सिंहासन-द्वात्रिंशिका।
३. सिंहासन-बत्तीसी—(वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई)।

: ३ :

मूषक-श्रेष्ठि-कथा

(कथासरित्सागरात्)

[भारतीय-कथा-साहित्य में बृहत्कथा का बड़ा सम्माननीय स्थान है। उसकी रचना आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व गुणाढ्य कवि ने पैशाची नामक प्राकृत भाषा में की थी। उसमें भारत की प्राचीन लोककथाओं का बड़ा सुन्दर और विशाल संग्रह था।

संस्कृत में उसके तीन भाषान्तर हुए—१. बुद्धस्वामी-कृत बृहत्कथा-श्लोक संग्रह, १. सोमदेव-कृत कथासरित्सागर, और ३. क्षेमेन्द्र-कृत बृहत्कथामंजरी। इनमें कथासरित्सागर सबसे विस्तृत है। उसमें लगभग २४००० श्लोक हैं। इस प्रकार परिमाण में वह वाल्मीकीय रामायण के बराबर है। बृहत्कथा अब इन संक्षिप्त अनुवादों के रूप में ही उपलब्ध है, मूल पैशाची ग्रन्थ लुप्त हो चुका है।

संकलित अंश कथासरित्सागर की छठी तरंग से उद्धृत किया गया है। इसमें दिखाया गया है कि एक चतुर पुरुष अपने अनवरत अध्यवसाय द्वारा किस प्रकार तुच्छातितुच्छ साधन से क्रमशः धनार्जन करता हुआ समृद्धिशाली बन जाता है।

इससे मिलती-जुलती एक कथा बौद्ध जातकों में चुल्ल-सेट्ठि-जातक में आयी है जिसके अन्त में यह गाथा है—

अप्पकेनापि मेधावी पाभतेन विचक्खणो।
समुट्ठापेति अत्तानं अणुं अग्गीव सन्धमं॥

(१)

अन्योन्य निज-वाणिज्य-कला-कौशल-वादिनाम् ।
क्वचिच्च वणिजां मध्ये वणिगेकोऽब्रवीदिदम् ॥१॥
अर्थः संयमवानर्थान् प्राप्नोति कियदद्भुतम् ?
मया पुनर्विनैवार्थं लक्ष्मीरासादिता पुरा ॥२॥

(२)

गर्भस्थस्य च मे पूर्वं पिता पञ्चत्वमागतः ।
मन्मातुश्च तदा पापैर् गोत्रजः सकलं हृतम् ॥३॥
ततः सा तद्-भयाद् गत्वा रक्षन्ती गर्भमात्मनः ।
तस्थौ कुमारदत्तस्य पितृ-मित्रस्य वेश्मनि ॥४॥
तत्र तस्याश्च जातोऽहं साध्व्याः वृत्ति-निबन्धनम् ।
ततश्चावर्धयत् सा मां कृच्छ्र-कर्माणि कुर्वती ॥५॥
उपाध्यायमथाभ्यर्थ्य तयाकिञ्चन्य - दीनया ।
क्रमेण शिक्षितश्चाहं लिपिं गणितमेव च ॥६॥

(३)

वणिक्पुत्रोऽसि तत् पुत्र ! वाणिज्यं कुरु सांप्रतम् ।
विशाखिलाख्यो देशेऽस्मिन् वणिक् चास्ति महा-धनः ॥७॥
दरिद्राणां कुलीनानां भाण्ड-मूल्यं ददाति सः ।
गच्छ याचस्व तं मूल्यमिति माताब्रवीच्च माम् ॥८॥
ततोऽहमगमं तस्य सकाशं, सोऽपि तत्क्षणम् ।
इत्यवोचत् क्रुधा कञ्चिद् वणिक्पुत्रं विशाखिलः ॥९॥
मूषको दृश्यते योऽयं गत-प्राणोऽत्र भू-तले ।
एतेनापि हि पण्येन कुशलो धनमर्जयेत ॥१०॥

दत्तास्तव पुनः पाप ! दीनारा हृवो मया ।
दूर तिष्ठतु तद्-वृद्धिस् त्वया तेऽपि न रक्षिताः ॥११॥
तच्छ्रुत्वा सहसैवाहं तमवोचं विशाखिलम् ।
गृहीतोऽयं मया त्वत्तो भाण्ड-मूल्याय मूषकः ॥१२॥
इत्युक्त्वा मूषकं हस्ते गृहीत्वा संपुटे च तम् ।
लिखित्वाऽस्य गतोऽभूवमहं सोऽप्यहसद् वणिक् ॥१३॥

(४)

चणकाञ्जलि-युग्मन मूल्येन स च मूषकः ।
मार्जारस्य कृते दत्तः कस्यचिद् वणिजो मया ॥१४॥
कृत्वा तांश्चणकान् भृष्टान् गृहीत्वा जल-कुम्भिकाम् ।
अतिष्ठं चत्वरे गत्वा छायायां नगराद् बहिः ॥१५॥
ततः श्रान्तागतायाम्भः शीतलं चणकांश्च तान् ।
काष्ठ-भारिक-सङ्घाय स-प्रश्रयमदामहम् ॥१६॥
एकैकः काष्ठिकः प्रीत्या काष्ठे द्वे द्वे ददौ मम ।
विक्रीतवानहं तानि नीत्वा काष्ठानि चापणे ॥१७॥
ततः स्तोकेन मूल्येन क्रीत्वा तांश्चणकांस् ततः
तथैव काष्ठिकेभ्योऽहमन्यद्युः काष्ठमाहरम् ॥१८॥

(५)

एवं प्रतिदिनं कृत्वा प्राप्य मूल्यं क्रन्मामया ।
काष्ठिकेभ्योऽखिलं दारु क्रीतं तेभ्यो दिन-त्रयम् ॥१९॥
अकस्मादथ संजाते काष्ठच्छेदेऽति-वृष्टिभिः ।
मया तद् दारु विक्रीतं पणानां बहुभिः शतैः ॥२०॥
तेनैव विपणिं कृत्वा धनेन निज-कौशलात् ।
कुर्वन् वाणिज्यं क्रमशः संपन्नोऽस्मि महा-धनः ॥२१॥

सौवर्णो मूषकः कृत्वा मया तस्मै समर्पितः ।
विशाखिलाय सोऽपि स्वां कन्यां मह्यमदात् ततः ॥२२॥
अत एव च लोकेऽस्मिन् प्रसिद्धो मूषकाख्यया ।
एवं लक्ष्मीरियं प्राप्ता निर्धनेन सता मया ॥२३॥

(६)

तच्छ्रुत्वा तत्र तेऽभूवन् वणिजोऽन्ये स-विस्मयाः ।
धीर्न चित्रीयते कस्मादभित्तौ चित्र-कर्मणा ॥२४॥

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ-बताओ—

अन्योन्यं, संयमवान्, आसादिता, पञ्चत्वम्, आगतः, वेश्म आकिञ्चन्यं, भाण्ड-मूल्यं, संपुटे, स-प्रश्रयं, अदाम्, अन्येद्युः, चित्रीयते, अभित्तौ ।

(२) पर्याय-शब्द बताओ—

दृश्, कुशल, हस्त, कृते, धी ।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—

क्वचिच्च, वणिगेकः, ततोऽहम्, सोऽप्यहसद्, वणिक, लक्ष्मीरियम्।,

(२) समास-विग्रह करो—

मन्मातुः, तद्भयात्, पितृ-मित्रस्य, आकिञ्चन्य-दीनया ।

(३) वर्तमान-कृदन्त और भूत-कृदन्त बनाओ—

आ+गम्, हृ, रक्ष्, कृ, शिक्ष्, दा, जप्, सिध् ।

(४) ये रूप किस काल और किस पुरुष के हैं—

अब्रवीत्, अवर्धयत्, कुरु, अगमम्, याचस्व, दृश्यते, अर्जयेत्, अहसत्, अतिष्ठम्, आहरम् ।

(३)

(१) वाच्य-परिवर्तन करो—
श्लोक ११, श्लोक २२।

(२) मृत मूषक को लेकर जाने के पश्चात् मूषक-श्रेष्ठी ने किस प्रकार धनार्जन किया ? यह संस्कृत में लिखो।

(४)

(१) साधनों के अभाव में भी मूषक-श्रेष्ठी को धनार्जन में क्यों सफलता मिली ? उसके किन गुणों के कारण सफलता सम्भव हुई ?

(२) क्या आप कोई ऐसा कार्य करते हैं जिससे आपको अपने कुटुम्ब की आर्थिक स्थिति सुधारने में सहायता मिलती हो ?

(३) इस कथा से तत्कालीन समाज के चित्र पर क्या प्रकाश पड़ता है ?

(४) निर्धन व्यक्तियों के अपनी बुद्धि द्वारा धनवान बनने के कोई उदाहरण ज्ञात हों तो बताओ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. कथा-सरित्सागर—(निर्णयसागर प्रेस)।
२. कथा-सरित्सागर—(जीवानन्द कृत गद्य-रूपान्तर)।
३. कथा-सरित्सागर—हिन्दी-अनुवाद (सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली)।
४. कथा-सरित्सागर—संक्षिप्त हिन्दी-अनुवाद (इण्डियन प्रेस)।
५. चुल्ल-सेट्ठि-जातक—जातक, हिन्दी-अनुवाद, भाग १ (हिन्दी साहित्य सम्मेलन)।

। ४ ।

जन्म-बर्बर-कथा

(पुरुष-परीक्षायाः)

[संस्कृत के बालोपयोगी नीति-सम्बन्धी कथा-साहित्य में पुरुष-परीक्षा की बहुत प्रसिद्धि है। इसकी रचना मिथिला के प्रसिद्ध विद्वान् और कवि विद्यापति ने विक्रम की पन्द्रहवीं शताब्दी में की थी। विद्यापति मिथिला के निवासी थे। मिथिला के महाराजा शिवसिंह के वे घनिष्ठ मित्र थे। हिन्दी के महाकवियों में उनका प्रमुख स्थान है। उनकी पदावली अपनी भावपूर्णता, मधुरता और मर्मस्पर्शिता में अनुपमेय है।

हिन्दी (मैथिली) के अतिरिक्त उन्होंने संस्कृत और अपभ्रंश में भी बहुत-सी रचना की। अपभ्रंश रचनाओं में कीर्ति-लता तथा संस्कृत रचनाओं में पुरुष-परीक्षा, लिखनावली और भू-परिक्रमा साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं।

संकलित अंश पुरुष-परीक्षा से लिया गया है। उसमें बताया गया है कि जन्म से निर्बुद्धि कितना ही शास्त्राभ्यास कर ले, फिर भी मूर्ख-का मूर्ख ही रहता है। जन्म-मूर्ख की यह कथा बहुत प्रसिद्ध कथा है जो जनता में अनेक रूपों में प्रचलित है। विद्यापति ने इसे सरल और नाट्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया है।]

आसीत् कौशाम्बी नाम नगरी। तस्यां देवधर-नामा गणकः प्रतिवसति स्म। तस्य शान्तिधरो नाम पुत्रो बभूव। स च जन्म-बर्बरः पित्रा पाठ्यमानः पदार्थं नाधिगच्छति। तथा हि—

पिता ददाति पुत्रेभ्यः सर्वस्वं परितोषवान्।
न तु भाग्यं च बुद्धिश् च दातुं तेनापि शक्यते॥

ततो महता समयेन महता च पितुः श्रमेण स शुकवदभ्यस्त-शास्त्रो बभूव। ततः स गणको राज्ञे तं पुत्रमुपनिनाय। तं दृष्ट्वा राजोवाच—अये देवघर-गणक! किमधीतमनेन पुत्रेण? गणक उवाच—देव! गणित-शास्त्रमधीतम् अनेन, प्रश्नं च जानाति। तदनन्तरं स-कौतुको राजा सुवर्णाङ्गुलीयकमेकं मुष्टौ कृत्वा तमुवाच—अये गणक-कुमार! जानीहि तावत् किं वस्तु मम मुष्टौ वर्तते? ततो गणक-पुत्रः कठिनीमादाय शास्त्रानुसारेण गणयामास। गणनया च विदित्वाब्रवीद्—देव! धातु-रूपं वस्तु देवस्य मुष्टौ वर्तते। राजोवाच—संवादिनी वाक्। गणक-पुत्रः पुनरुवाच—मण्डलाकृति वस्तु विद्यते। राजोवाच—समुदितं वचः। गणक-पुत्रः पुनरब्रवीत्—गुरु द्रव्यं, मध्ये शून्यं च भवति। राजोवाच—साधु, गणक-कुमार! साधु, भद्रं जानासि, कथय कथय।

ततो राज-प्रशंसया जात-रभसस् त्वरितं कथयामि इति गणनामपहाय निजोहेन कथयामास—देव! पाषाण-घरट्टक-मण्डलं विद्यते देवस्य मुष्टि-गर्भे।

राजा विहस्योवाच—अये गणक! तव पुत्रः शास्त्रे कृता-भ्यासोऽस्ति किन्त्वबुद्धिः। यावद्दरं शास्त्रानुसारिण्या गणनया कथितं तावत् संवाद एव, अन्यच्च स्वकीयोहेन यदुक्तं तत्र विसंवादो वृत्तः। अरे जन्मान्ध! किं त्वं न जानासि घरट्टक-मण्डलं महत् पाषाण-मयं मनुष्य-मुष्टि-गर्भे न संभवति इति? तस्माद-वश्यं बुद्धि-हीनोऽसि।

इत्यभिधाय राजा तस्मै किञ्चिद् वस्तु दत्वा तमाज्ञप्तवान्।

गुरुं निषेवन्नपि जीवयान;
भ्रमन् धरिव्यामपि यावदम्बुधि।

अधीत्य शास्त्राण्यपि चिन्तयन् मुहुर,
धिया विहीनो न हि याति धन्यताम् ॥

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—
गणक, बर्बर, पदार्थ, अधिगच्छति, प्रश्न, उपनिनाय, कठिनी जात-रभसः, ऊह्, संवादिनी, संवाद, विसंवाद, वृत्त।

(२) पर्याय-शब्द लिखो—
पुत्र, वाक्, गणक।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—
शास्त्रानुसारेण, राजोवाच, पुनरब्रवीत्, निजोहेन, किन्त्वबुद्धिः, अन्यच्च, तस्मादवश्यं, इत्यभिधाय, निषेवन्नपि, शास्त्राण्यपि।

(२) सासम-विग्रहकरो—
देवधर-नामा, अभ्यस्त-शास्त्रः, सुवर्णाङ्गुलीयकम्, गणक-कुमारः कृताभ्यासः, अबुद्धिः, स्वकीयोहेन, जन्मान्धः।

(३) प्रकृति और प्रत्यय बताओ—
पाठ्यमानः, अभ्यस्त, अधीतं, गणना, विहस्य, अभिधाय, आज्ञप्त-वान्, निषेवन्, चिन्तयन्, धन्यताम्।

(४) गम् धातु के पूर्व विभिन्न उपसर्ग जोड़कर नयी क्रियाएँ बनाओ और उनके अर्थ लिखो।

(३)

(१) राजा और गणक-कुमार की बातचीत को संवाद-रूप में संस्कृत में लिखो।

(२) वाच्य-परिवर्तन करो--
पित्रा पाठ्यमानः पदार्थं नाधिगच्छति ।
इत्यभिधाय राजा किञ्चिद् वस्तु दत्त्वा तम् आज्ञप्तवान् ।

(४)

(१) 'शुकवद् अभ्यस्तशास्त्रो बभूव'—इस वाक्य का क्या तात्पर्य है ?
(२) शास्त्र का जानकार होने पर भी गणक-कुमार से गलती क्यों हुई ?
(३) गणक-कुमार अबुद्धि था । इसका पता कैसे चला ?
(४) मूर्ख किसे कहते हैं ? आपकी सम्मति में मूर्खों की श्रेणी में किस-किस प्रकार के व्यक्ति आवेंगे ? (इस सम्बन्ध में संस्कृत में मूर्ख-शतक नामक पुस्तक देखो) ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. पुरुष-परीक्षा—हिन्दी-अनुवाद सहित (वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई) ।
२. पुरुष-परीक्षा—हिन्दी-अनुवाद (पुस्तक मन्दिर, लहरियासराय) ।
३. पुरुष-परीक्षा-कथा-संग्रह—(लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा) ।

: ५ :

नाहं बलाका

(कथासरित्सागरात्)

[अहंकारी तापस, पतिव्रता साध्वी और मातृ-पितृ-भक्त धर्मव्याध की यह उपदेशपूर्ण कथा भारतीय कथा-साहित्य की बहुत प्रसिद्ध कृति है। महाभारत के वन-पर्व में बड़े विस्तार के साथ इसका वर्णन हुआ है (अध्याय १६६ से १७८)।

कथासरित्सागर की ५६वीं तरंग में भी यह कथा आयी है। संकलित अंश कथासरित्सागर के गद्य रूपान्तर से उद्धृत किया गया है।]

आसीत् पुरा कोऽपि महातपा वन-वासी मुनिः। कदाचित् तरुच्छायोपविष्टस्य तस्योपरि बलाकैका विष्ठामुत्ससर्ज। स च क्रुद्धस्तां ददर्श। दृष्टमात्रैव सा बलाका भस्मसादभूत्। ततश्च स मुनिः तपः-प्रभावादहङ्कारमापद्यत।

एकदासौ मुनिः क्वापि नगरे एकं ब्राह्मण-गृहमेत्य तद्-गृहिणीं भिक्षामयाचत। सा तु गृहिणी पतिव्रता 'प्रतीक्षस्व क्षणं यावद् भर्तुः परिचर्यां समापये' इति तं निजगाद। ततश्च तं कोप दृष्ट्या वीक्षमाणं निरीक्ष्य सा विहस्याभ्यभाषत—मुने। नाहं-बलाकेति। तदाकर्ण्य मुनिरद्भुतम्मन्यमान एतत् कथमिव ज्ञातमनया इति चिन्तयन् तत्र समुपविश्य तस्थौ।

ततश्च सा साध्वी आदावग्नि-कार्यं ततः भर्तुः शुश्रूषां कृत्वा भिक्षामादाय मुनेरन्तिकमाजगाम। स च मुनिः बद्धाञ्जलसि

तामवदत्—कथं त्वया अनन्य-गोचरो बलाका-वृत्तान्तो ज्ञात इत्यतो ब्रूहि, ततो भिक्षां ग्रहीष्ये। इत्युक्तवन्तं तं मुनिं सोवाच—मुने! न भर्तृ-सेवाया अपरं कंचन धर्मं करोम्यहम्। तत्प्रसादेन मे एतादृशं विज्ञानम्। किं चेतः धर्मव्याधाख्यं कंचन मांसविक्रयिणं गत्वतत् पृच्छ। ततस्ते श्रेयः भविष्यति। निरहङ्कारश्च भविष्यसि। इति। एवं सर्वविदा पतिव्रतयाभिहितः गृहीतातिथि-सत्कारस्तां प्रणम्य स मुनिस्तस्मात् गृहाद् निरगात्।

अन्येद्युः स मुनिः समन्विष्य तं धर्मव्याधं विपणि-स्थं मांसानि विक्रीणन्तमुपागच्छत्। धर्मव्याधश्च दृष्ट्वैव तं मुनिमभाषत—ब्रह्मन्। किं पतिव्रतया तया इह त्वं प्रेषितः? तदाकर्ण्यं स मुनिर्विस्मितः तं धर्मव्याधमवादीत्—भद्र! मांसविक्रयिणस्ते कथमीदृशं विज्ञानम्?

इत्यभिहितवन्तं तं मुनिं धर्मव्याधो निजगाद—ब्रह्मन्! अहं माता-पित्रोर्भक्तः। तौ हि मम परायणम्। तयोः स्नपितयोः स्नामि भोजितयोर् भुञ्जे शायितयोश्च शये। तेन मे एतादृशं विज्ञानम्। अन्य-हतानां च मृगादीनां मांसानि, स्व-धर्म इति वृत्त्यर्थं, न तु अर्थ-लालस्येन, विक्रीणे। हे मुने! ज्ञानविघ्नोऽहङ्कारस् तं मुक्त्वा स्वधर्मं चर, येनाशु परं श्रेयोऽवाप्स्यसि।

इत्येवमनुशिष्टस्तेन धर्मव्याधेन स मुनिस्तद्-गृहान् गत्वा तस्य धर्मव्याधस्य सर्वां क्रियामवलोक्य परितुष्टो वनमगात्। अवाप च तदुपदेशात् सिद्धिम्।

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ लिखो—

उत्ससर्ज, आपद्यत, अग्नि-कार्यं, निरगात्, उपागच्छत्, परायणं, विज्ञानं, लालस्यं, श्रेयस्, अवाप ।

(२) विरोधी शब्द लिखो—

छाया, अहंकार, पति ।

(३) समानार्थक शब्द लिखो—

वन, गृह, अन्तिकं, आशु ।

(२)

(१) सन्धि करो—

छाया + उपविष्टः, एकदा + असौ, इति + उक्तवान्, तरु + छाया, बलाका + एका, करोमि + अहम्, गत्वा + एतत्, क्रुद्धः + ताम्, श्रेयः + अवाप्स्यसि, परितुष्टः + मनसि ।

(२) समास-विग्रह करो—

महातपाः, तरुच्छायोपविष्टस्य, तपःप्रभावात्, तद्गृहिणी, बद्धाञ्जलिः, निरहङ्कारः, अन्यहृतानां, माता-पित्रोः, तदुपदेशात् ।

(३) निम्नलिखित शब्दों में उपसर्ग, धातु और प्रत्यय को अलग-अलग बताओ—

उपविष्ट, दृष्ट, एत्य, वीक्षमाण, मन्यमान, आदाय, उक्तवत्, अभिहित, विस्मित, भक्त, स्नपित, भोजित, विज्ञान, मुक्त्वा, अनुशिष्ट, सिद्धि ।

(४) हेतुकृदन्त (Infinitive) किस प्रकार बनता है ? हेतुकृदन्त के ५ उदाहरण लिखो ।

(५) ये रूप कहाँ के हैं ?
अयाचत, प्रतीक्षस्व, ग्रहीष्ये, उपागच्छत, भुञ्जे, विक्रीणे ।

(६) स्नात और स्नपित, भुक्त और भोजित तथा शयित और शायित में अन्तर बताओ ।

(३)

(१) धर्मव्याध ने मुनि से जो बात कही, उसे अपने शब्दों में लिखो ।

(२) निम्नलिखित शब्दों का प्रयोग वाक्यों में करो—
एकदा, येन, आकर्ण्य, यावद्, इति ।

(४)

(१) कथा का भीतरी आशय क्या है ?

(२) व्याध माता-पिता की सेवा किस प्रकार करता था ? (इस सम्बन्ध में महाभारत, वनपर्व, अध्याय १७७ देखो) ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. कथा-सरित्सागर—तरंग ५६ ।
२. महाभारत—वनपर्व, अध्याय १६९-१७८ ।
३. पद्मपुराण—सृष्टिखण्ड, अध्याय ५०-५६ ।
४. द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी—भारतीय उपाख्यानमाला ।
५. राजगोपालाचार्य—महाभारत-कथा, प्रकरण ३८ ।

: १ :

सुभाषितानि (१)

[सुभाषित का अर्थ है सुन्दर उक्ति। सुभाषित उस भावपूर्ण अथवा चुटीली उक्ति को कहते हैं जो हृदय में सटीक जा बैठे। संस्कृत-साहित्य में सुभाषितों का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। कहा गया है--

पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि जलमन्नं सुभाषितम्।
मूढैः पाषाण-खण्डेषु रत्न-संज्ञा विधीयते॥

संस्कृत-सुभाषितों के अनेक संग्रह तैयार किये गये जिनमें कवीन्द्र-वचन-समुच्चय, सदुक्ति-कर्णामृत, सूक्ति-मुक्तावली, शार्ङ्गधर-पद्धति और सुभाषितावली विशेष प्रसिद्ध हैं। आधुनिक काल के संग्रहों में सुभाषित-रत्न-भाण्डागार सबसे महत्त्वपूर्ण है। सुभाषित-संग्रहों में यह सबसे बड़ा है। छोटे संग्रहों में समयोचित-पद्य-मालिका उल्लेखनीय है। दोनों बम्बई के निर्णयसागर प्रेस से प्रकाशित हुए हैं।]

अपूर्वः कोऽपि कोषोऽयं विद्यते तव, भारति !
व्ययतो वृद्धिमायाति क्षयमायाति संचयात् ॥१॥
विद्या ददाति विनयं, विनयाद् याति पात्रताम्।
पात्रत्वाद् धनमाप्नोति, धनाद् धर्मं, ततः सुखम् ॥२॥
अजरामर-वत् प्राज्ञो विद्यामर्थं च चिन्तत्।
गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत् ॥३॥
अन्न-दानं परं दानं, विद्या-दानं ततः परम्।
अन्नेन क्षणिका तृप्तिर्, यावज्जीवं च विद्यया ॥४॥

क्षणशः कणशश्चैव विद्यामर्थं च चिन्तयेत् ।
क्षण-त्यागात् कुतो विद्या, कण-त्यागात् कुतो धनम् ॥५॥
सुखार्थिनः कुतो विद्या, कुतो विद्यार्थिनः सुखम् ।
सुखार्थी वा त्यजेद् विद्यां, विद्यार्थी वा त्यजेत् सुखम्॥६॥
महाजनस्य संसर्गः कस्य नोन्नति-कारकः ।
पद्म-पत्र-स्थितं वारि धत्ते मुक्ताफल-श्रियम् ॥७॥
तृणानि भूमिरुदकं वाक् चतुर्थी च सूनृता ।
एतान्यपि सतां गे नोच्छिद्यन्ते कदाचन ॥८॥
प्रिय - वाक्य - प्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः ।
तस्मात् तदेव वक्तव्यं, वचने का दरिद्रता ? ॥९॥
सुलभाः पुरुषा राजन् ! सततं प्रियवादिनः ।
अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः ॥१०॥
सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात सत्यमप्रियम् ।
प्रियं च नानृतं ब्रूयाद्, एष धर्मः सनातनः ॥११॥
पयःपानं भुजङ्गानां केवलं विष-वर्द्धनम् ।
उपदेशस् तु मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये ॥१२॥
शैले शैले न माणिक्यं, मौक्तिकं न गजे गजे ।
साधवो न हि सर्वत्र, चन्दनं न वने वने ॥१३॥
गच्छन् पिपीलको याति योजनानां शतान्यपि ।
अगच्छन् वैनतेयोऽपि पदमेकं न गच्छति ॥१४॥
परोपदेशे पाण्डित्यं सर्वेषां सुकरं नृणाम्
धर्मे स्वीयमनुष्ठानं कस्यचित् तु महात्मनः ॥१५॥
मातृवत् पर-दारेषु, पर-द्रव्येषु लोष्ठवत् ।
आत्मवत् सर्व-भूतेषु, यः पश्यति स पण्डितः ॥१६॥

काव्य-शास्त्र-विनोद कालो गच्छति धीमताम् ।
व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ॥१७॥
पुस्तक-स्था तु या विद्या, पर-हस्त-गतं धनम् ।
कार्य-काले समःपन्ने न सा विद्या न तद् धनम् ॥१८॥
मरु-स्थल्यां यथा वृष्टिः, क्षुधार्ते भोजनं यथा ।
दरिद्रे दीयते दानं, सफलं पाण्डु-नन्दन ! ॥१९॥
आलस्यं हि मनुष्याणां शरीर-स्थो महान रिपुः ।
नास्त्युद्यम-समो बन्धु, कृत्वा यं नावसीदति ॥२०॥
अलसस्य कुतो विद्या, कुतोऽविद्यस्य वै धनम् ।
अ-धनस्य कुतो मित्रम्, अमित्रस्य कुतः सुखम् ॥२१॥
बहूनामप्यसाराणां संहतिः कार्य-साधिका ।
तृणंर् गुणत्वमापन्नैर् बध्यन्ते मत्त-दन्तिनः ॥२२॥
सेवितव्यो महान् वृक्षो फलच्छाया - समन्वितः ।
यदि दैवात् फलं नास्ति, च्छाया केन निवार्यते ? ॥२३॥
गते शोको न कर्तव्यो, भविष्यं नैव चिन्तयेत् ।
वर्तमानेन कालेन वर्तयन्त विचक्षणाः ॥२४॥
क्षणे तुष्टाः क्षणे रुष्टास् तुष्टा रुष्टा क्षणे-क्षणे ।
अ-व्यवस्थित-चित्तानां प्रसादोऽप भयङ्करः ॥२५॥
मनसा चिन्तितं कार्यं वचसा न प्रकाशयेत् ।
अन्य-लक्षित-कायस्य यतः सिद्धि न जायते ॥२६॥
परोक्षे कार्य-हन्तारं, प्रत्यक्षे प्रिय-वादिनम् ।
वर्जयेत् तादृशं मित्रं विष-कुम्भं पयो-मुखम् ॥२७
को न याति वशं लोके मुखे पिण्डेन पूरिते ।
मृदङ्गो मुख लेपेन करोति मधुर-ध्वनिम् ॥२८॥

गच्छतः स्खलनं क्वापि, भवत्यव प्रमादतः ।
हसन्ति दुर्जनास् तत्र, समादधति सज्जनः ॥२६॥

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ लिखो—

पात्रता, संसर्ग, सूनृता, गुणत्व, आपन्न, स्खलन ।

(२) समानार्थक शब्द लिखो—

भारती, पयः, भुजंग, भोजन, रिपु, वृक्ष ।

(३) विपरीत शब्द लिखो—

सुलभ, पथ्य, सुकर, महत्, मधुर, उन्नति, वक्ता, प्रकोप, व्यय ।

(२)

संधि-विच्छेद करो—

विनयाद्याति, कणशश्चैव, नास्त्युद्यम-समोबन्धुः, तुष्टाः रुष्टाः, सिद्धिर्न

(२) समास-विग्रह करो—

अपूर्वः, यावज्जीवं, पद्म-पत्र-स्थितं, प्रिय-वाक्य-प्रदानेन, अप्रियम् पयःपानम्, पुस्तकस्था, पाण्डु-नन्दनः, उद्यम-समः, अ-धनः, मत्तदन्तिनः, फलच्छाया-समन्वितः, अव्यवस्थित-चित्तानाम् अन्यलक्षित-कार्यस्य, विषकुम्भं, पयोमुखम् ।

(३) उपसर्ग, धातु और प्रत्यय बताओ—

समादधति, आयाति, अवसीदति ।

(४) इस पाठ में जितने वर्तमान-कृदन्त और विधि-कृदन्त हों, उनको चुनो ।

(३)

(१) इन पद्यों का भाव संस्कृत में लिखो—
श्लोक ७, श्लोक २६।

(२) विद्या के सम्बन्ध में पाँच पंक्तियाँ संस्कृत में लिखो।

(४)

(१) हिन्दी और अंग्रेजी की कुछ ऐसी लोकोक्तियाँ या पद्य लिखो जिनका भाव इस पाठ के श्लोकों से मिलता जुलता हो।

(२) इस पाठ के पाँच श्लोकों को कंठस्थ करो।

: ७ :

पण्डित-शत्रुः

(पञ्चतन्त्रात्)

[संस्कृत के कथा-साहित्य के दो विभाग किये जा सकते हैं—(१) उपदेश-प्रधान, और (२) मनोरंजन-प्रधान। बृहत्कथा, कथा-सरित्सागर, विक्रम-चरित, वेताल-पञ्चविंशति आदि दूसरे विभाग में आते हैं और पञ्चतन्त्र, हितोपदेश आदि प्रथम विभाग में। इस विभाग का सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रंथ पञ्चतन्त्र है।

जैसा कि नाम से सूचित होता है, पञ्चतन्त्र में पांच अध्याय हैं—१. मित्र-भेद, २. मित्र-संप्राप्ति, ३. काकोलूकीय, ४. लब्ध-प्रणाश और ५. अपरीक्षित-कारक। प्रत्येक तन्त्र में एक प्रधान कथा है जिसके अन्तर्गत अनेक उपकथाएँ तथा गौण कथाएँ हैं। कथाओं के साथ उपदेशात्मक श्लोक हैं।

पञ्चतन्त्र के कर्ता का नाम विष्णुशर्मा कहा गया है। कहा जाता है कि किसी राजा के चार राजकुमार थे, जिनको पढ़ना-लिखना सुहाता ही न था। उनको शिक्षित, नीति-कुशल और सदाचार-संपन्न बनाने के लिए विष्णुशर्मा ने मनोरंजक कथाओं का सहारा लिया।

पञ्चतन्त्र की देश और विदेश में सर्वत्र बड़ी प्रसिद्धि हुई। संस्कृत, प्राकृत तथा देशी-भाषाओं में उसके अनेक रूपान्तर और संस्करण प्रस्तुत हुए—पहलवी, अरबी, सीरियक, यूनानी, लैटिन, हिब्रू आदि अनेक विदेशी भाषाओं में उसके अनुवाद हुए। ईसप की कहानियों का मूल भी पञ्चतन्त्र की कथाओं को ही बताया गया है।

पञ्चतन्त्र बड़ी सरल शैली में लिखा गया है। उसकी भाषा सीधी-

सादी और मुहावरेदार है। व्यावहारिक जीवन के दर्शन पर इतना सुन्दर ग्रन्थ दूसरा नहीं है।

संकलित कथा प्रथम तन्त्र (मित्र-भेद) की २२वीं और अन्तिम कथा है।]

एकस्मिन्नगरे कोऽपि विप्रो महा-विद्वान्, परं पूर्व-जन्म-योगेन चौरो, वर्तते। स तस्मिन् पुरेऽन्यदेशादागतांश् चतुरो विप्रान् बहूनि वस्तूनि विक्रीणतो दृष्ट्वाचिन्तितवान्—अहो! केनोपायेनैषां धनं लभे? इति विचिन्त्य तेषां पुरोऽनेकानि शास्त्रोक्तानि सुभाषितानि चातिप्रियाणि मधुराणि वचनानि च जल्पता तेषां मनसि विश्वासमुत्पाद्य सेवां कर्तुमारब्धा। अथवा साध्विदमुच्यते—

असती भवति स-लज्जा, क्षारं नीरं च शीतलं भवति।
दम्भी भवति विवेकी, प्रिय-वक्ता भवति धूर्त्त-जनः ॥१॥

अथ तस्मिन् सेवां कुर्वति तैर्विप्रैः सर्व-वस्तूनि विक्रीय बहु-मूल्यानि रत्नानि क्रीतानि। ततस् तानि जङ्घा-मध्ये तत्समक्षं प्रक्षिप्य स्वदेशं प्रति गन्तुमुद्यमो विहितः। ततः स धूर्त्त-विप्रस् तान् विप्रान् गन्तुमुद्यतान् प्रेक्ष्य चिन्ता-व्याकुलित-मनाः संजातः। अहो! धनमेतन् न किञ्चिन् मम चटितम्, अथैभिः सह यामि, पथि क्वापि विषं दत्त्वतान् निहत्य सर्वरत्नानि गृह्णामि। इति विचिन्त्य तेषामग्रे स-करुणं विलप्येदमाह—भो मित्राणि! यूयं मामेकाकिनं मुक्त्वा गन्तुमुद्यताः। मम मनो भवद्भिः सह स्नेह-पाशेन बद्धं भवद्विरह-नाम्नैवाकुलं तथा संजातं यथा धृतिं क्वापि न धत्ते। यूयमनुग्रहं विधाय सहाय-भूतं मामपि सहैव नयत।

तद्वचः श्रुत्वा ते करुणार्द्र-चित्तास् तेन सममेव स्वदेशं प्रति

प्रस्थिताः। अथाध्वनि तेषां पञ्चानामपि पल्लीपुर-मध्य व्रजतां ध्वाङ्क्षाः कथयितुमारब्धाः—रे रे किराताः! धावत धावत, सपाद-लक्ष-धनिनो यान्ति, एतान्निहत्य धनं नयत।

ततः किरातैर्ध्वाङ्क्ष-वचनमाकर्ण्य सत्वरं गत्वा ते विप्रा लगुड-प्रहारैर् जर्जरीकृत्य वस्त्राणि मोचयित्वा विलोकिताः, परं धनं किञ्चिन् न लब्धम्। तदा तैः किरातैरभिहितम्—भोः पान्थाः! पुरा कदापि ध्वाङ्क्ष-वचनमनृतं नासीत्, तद् भवतां संनिधौ क्वापि धनं विद्यते, तदर्पयत, अन्यथा सर्वेषामपि वधं विधाय चर्म विदार्य प्रत्यङ्गं प्रेक्ष्य धनं नेष्यामः। इति।

तदा तेषामीदृश-वचनमाकर्ण्य चौर-विप्रेण मनसि चिन्तितम्—यदैषां विप्राणां वधं विधायाङ्गं विलोक्य रत्नानि नेष्यन्ति तदापि मां वधिष्यन्ति। ततोऽहं पूर्वमेवात्मानमरत्नं समर्प्यैतान् मुञ्चामि। उक्तं च—

मृत्योर्विभेषि किं बाल! न स भीतं विमुञ्चति।
अद्य वाब्द-शतान्ते वा मृत्युर्वै प्राणिनां ध्रुवः ॥२॥

तथा च—

गवार्थे ब्राह्मणार्थे च प्राण-त्यागं करोति यः।
सूर्यस्य मण्डलं भित्त्वा स याति परमां गतिम् ॥३॥

इति निश्चित्य तेनाभिहितम्—भोः किराताः! यद्येवं ततो मां पूर्वं निहत्य विलोकयत।

ततस् तस् तथाऽनुष्ठिते धन-रहितमवलोक्यापर चत्वारोऽपि मुक्ताः। अतोऽहं ब्रवीमि—

पण्डितोऽपि वरं शत्रुः, न मूर्खो हित-कारकः ॥

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—

चतुरः, विहितः, घटितं, सहायभूतं, ध्वाङ्क्षाः, अरत्म, बिभेषि, अब्दः।

(२) समानार्थक तथा विपरीतार्थक शब्द बताओ—

विद्वान्, बहूनि, अनृतं, मुक्ताः, शत्रुः ।

(२)

(१) ये रूप कहाँ के हैं ? इनका पद-परिचय (parsing) लिखो—

चतुरः, विक्रीणता, जल्पतः, अनुष्ठिते, ब्रवीमि ।

(२) सन्धि करो—

नाम्ना + एव, किञ्चित् + न, चत्वारः + अपि, आगताम् + चतुरः, सः + तस्मिन् ।

(३) समास करो—

महती सेवा, महतां सेवा, सर्वाणि रत्नानि, चिन्तया व्याकुलितं मनः येषां ते ।

(४) कृ धातु से निम्नलिखित कृदन्त बनाओ—

वर्तमानकृदन्त (स्त्रीलिंग), भूतकृदन्त (पुंल्लिग), विधिकृदन्त, हेतुकृदन्त, पूर्वकालिक कृदन्त ।

(३)

(१) किरातों ने ब्राह्मणों से क्या कहा ? चोर-ब्राह्मण ने क्या उत्तर दिया ? संस्कृत में लिखो ।

(२) वाच्य-परिवर्तन करो—

तदा तेषामीदृशवचनमाकर्ण्य····मुञ्चामि ?

(४)

(१) इस कथा से क्या शिक्षा मिलती है ?

(२) चोर ब्राह्मण ने शेष ब्राह्मणों की रक्षा कैसे और क्यों की ?

(३) विद्वान् शत्रु भी अच्छा, पर मूर्ख मित्र भी अच्छा नहीं—इस कहावत के उत्तरार्द्ध को चरितार्थ करने वाली कोई कथा लिखो।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. पञ्चतन्त्र—हिन्दी-अनुवाद सहित (निर्णयसागर प्रेस, बम्बई)।

२. पञ्चतन्त्र—हिन्दी-अनुवाद, मोतीचन्द्र-कृत (राजकमल, दिल्ली)।

३. पञ्चतन्त्र—हिन्दी-अनुवाद, संतराम-कृत (राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली)।

४. Panch Tantra, English Translation (Jaico Books)

५. संक्षिप्तं तन्त्राख्यानकम्—नरोत्तमदास स्वामी द्वारा संपादित। (श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा)

: ८ :

बहु-मान-कथानकम्

(बृहत्कथाकोषात्)

[संस्कृत के कथा-साहित्य की जितनी समृद्धि जैन विद्वानों द्वारा हुई, उतनी दूसरों द्वारा नहीं। जैनों द्वारा रचित संस्कृत कथा-साहित्य बहुत विशाल है। इन कथाओं के कुछ संग्रह कथा-कोष नाम से संकलित किए गये। इनमें हरिषेण-कृत बृहत्कथाकोष सबसे प्राचीन और सबसे बड़ा है। उसमें लगभग साढ़े बारह हजार श्लोक और १५७ कथाएँ हैं। उसकी रचना विक्रम-संवत् ९८९ में हुई। भाषा बहुत सरल और बोलचाल की सी है।

संकलित कथा ग्रंथ की २१वीं कथा है। कथा में यह बताया गया है कि प्राणियों का आदर-मान और सार-सँभाल करने से ही उनसे हम अपना कार्य सुचारु रूप से करवा सकते हैं, हम दूसरों का ध्यान रखेंगे तो दूसरे हमारा ध्यान रखेंगे, दूसरों की बेकद्री करके हम वास्तव में अपनी ही बेकद्री करते हैं।]

(१)

वाराणसी-समीपे च गङ्गा-रोधसि सुन्दरः ।
पलाशोपपदः कूटो ग्रामो बहु-धनोऽभवत् ॥१॥
आसीदशोक-नामात्र ग्रामे बहु-धनो धनी ।
महत्तरोऽस्य भार्या च नन्दा तन्मानस-प्रिया ॥२॥
ततोऽन्या सचिवोद्भूता सुनन्दा नाम कन्यका ।
परिणीता साशोकेन नन्दा वन्ध्येति सुन्दरी ॥३॥
अशोकः शोक-संत्यक्तो ऽनेक-गोकुल-नायकः ।
संतिष्ठते ऽग्रणीस् तत्र नन्दिताशेष-बान्धवः ॥४॥

वृषभध्वज - भूपाय घृत - कुम्भ - सहस्रकम् ।
वर्षे वर्षे प्रदायास्ते भुञ्जानो गो-कुलानि सः ॥५॥
दृष्ट्वाशोको महा-राटिं तदा नन्द-सुनन्दयोः ।
अर्धार्धं गो-कुलं कृत्वा ददौ कार्य-विचक्षणः ॥६॥

(२)

तदा गोपाल-भाण्डानां गवां च परिपालनैः ।
चकार सा सुनन्दा च बहु-मानं दिने दिने ॥७॥
ग्रामाद् गवां प्रयान्तीनामटवीं स्तोकमन्तरम् ।
प्रयाति च समं ताभिः सुनन्दा स्नेह-तत्परा ॥८॥
भूयोऽप्येकैकशो गाः स्वा गणयित्वा पुनः पुनः ।
गो-पालक-समूहानां समर्प्यायाति मन्दिरम् ॥९॥
वनाद् गृहं विशन्तीनां गवामायाति संमुखम् ।
भूयोऽपि गणयित्वा ताः प्रवेशयति मन्दिरम् ॥१०॥
आगतानां गृहं तासां बहु वट्टलकं वरम् ।
ददाति सा पुनस्तस्यै दुग्धं ददति ता बहु ॥११॥
तथा गोपालकेभ्योऽपि दुग्धं दधि घृतं बहु ।
ददाति भोजनं स्थानं चर्वणादिकमेव सा ॥१२॥
तेऽपि गो-पालका दृष्ट्वा यत्र निर्झर-नीरकम् ।
कोमलानि च शष्पाणि सन्ति तत्र नयन्ति गाः ॥१३॥
सुगन्धि शीतलं तोयं पाययित्वा पुनः पुनः ।
मृदु स्निग्धानि मृष्टानि चारयित्वा तृणान्यपि ॥१४॥
तरुच्छायासु मध्याह्ने कंचित्कालं निवेश्य ताः ।
गो-कीटान्वेषणेनात्र सु-हिताः कुर्वतेऽन्वहम् ॥१५॥

एवं गो-पालकाः प्रीतास् तकया बहु-मानिताः ।
वनं सुखेन गा नीत्वा चानयन्ति पुनर्गृहम् ॥१६॥
भाण्डकेषु पुनर्येषु दुग्धं दधि घृतं तथा ।
क्रियते, तेषु संस्कार करोति सततं सका ॥१७॥

(३)

नन्दा सु-यौवनोन्मत्ता सु-वल्लभ-तया प्रभोः ।
गो-गोप-भाण्डकानां च संमानं न करोति सा ॥१८॥
गवां वट्टलकं नैषां गोपालानां च भोजनम् ।
भाण्डकानां न संस्कारं करोति मद-विह्वला ॥१९॥
गावो ददति नो दुग्धं विना संमाननेन ताः ।
किंचिद् ददति चेदल्पं दुग्ध्वा गोपाः पिबन्ति तत् ॥२०॥
यत्-किंचिदल्पकं दुग्धं स्थाप्यते भाण्डकेषु तत् ।
अशुद्धेषु च सर्वेषु विनाशमुपगच्छति ॥२१॥
नास्ति नन्दा-गृहे दुग्धं न वा दधि घृतं न च ।
बहुमानं विना लोके न स्नेहो जायते नृणाम् ॥२२॥

(४)

अत्रान्तरे समाहूय नन्दाख्यां पूर्व-वल्लभाम् ।
अशोकः प्राह तां कान्तां सस्नेहं पुरतः स्थिताम् ॥२३॥
घृत-कुम्भ-सहस्रं च वृषभध्वज-भूभुजे ।
दातव्यमधुनाऽस्माभिर् निर्विकल्पं मनस्विनि ! ॥२४॥
शतानि घृतंकु-म्भानां पञ्च त्वं देहि मे प्रिये ! ।
एतावन्त्येव चान्यानि सुनन्दा दास्यति ध्रुवम् ॥२५॥

(५)

अशोक-वचनं श्रुत्वा नन्दा वदति सं क्रुधा ।
तावत्पञ्चशतान्यासन् घृतस्यैकं पलं न हि ॥२६॥
नन्दा-वचनमाकर्ण्य सुनन्दा जन-वाक्यतः ।
घृत-कुम्भ-सहस्रं वै ददावस्मै धवाय सा ॥२७॥
घृत-कुम्भ-सहस्रं च दृष्ट्वा स स्व-पुरः-स्थितम् ।
अशोको गो-कुलं तस्याः सुनन्दायाः समर्पयत् ॥२८॥
गृहं च स्व-धनं चैव स सर्वं जीवितं तथा ।
अशोकोपि सुनन्दाया ददौ तत्-प्रीत-मानसः ॥२९॥

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—
महत्तर, मानस, गो-कुल, भाण्ड, अटवी, समर्प्य, वट्टलक, चर्वण, शष्प, संस्कार, क्षुध्, पल, धव ।

(२) पर्याय-शब्द लिखो—
गो, अटवी, संमान, कान्ता ।

(३) प्रेम के वाचक अधिक-से-अधिक शब्द लिखो । उनमें कोई अन्तर हो तो उसे समझाओ ।

(२)

(१) प्रेरणार्थक वर्तमान अन्यपुरुष के रूप लिखो—
पा (पीना), चर् (चरना) ।

(२) पूर्वकालिक-कृदन्त कैसे बनाया जाता है ? इस पाठ में जो पूर्व-कालिक-कृदन्त आये हैं, उनको चुनो ।

(३) विशेषणों से भाववाचक संज्ञाएँ बनाओ—
शीतल, मधुर, सुन्दर ।

(४) प्रत्येक युग्म के अन्तर को स्पष्ट करो—
ददाति और ददति, आयाति और प्रयाति, सन्ति और भवन्ति ।

(३)

(१) इस कथा को संस्कृत में अपने शब्दों में लिखो ।

(२) वाच्य-परिवर्तन करो—
श्लोक ३, श्लोक २० ।

(३) इस पाठ में जितने कर्मवाच्य (वर्तमानकाल) के रूप आये हैं, उनको चुनो और उनका प्रयोग वाक्यों में करो ।

(४)

(१) नन्दा और सुनन्दा के चरित्र में क्या अन्तर था ? नन्दा क्यों असफल हुई और सुनन्दा क्यों सफल ?

(२) इस कथा से क्या शिक्षा मिलती है ?

(३) गो-सेवा से क्या लाभ होता है ? गो-सेवा किस प्रकार करनी चाहिए ?

(४) क्या आप अपनी गौ की वैसी ही सँभाल रखते हैं जैसी सुनन्दा रखती थी ?

विशेष पठन के लिए सामग्री

१ हरिषेण वृहत्कथाकोष (सिंघी जैन ग्रन्थमाला)
२ वही – हिन्दी-अनुवाद (भारतीय दिगम्बर जैन संघ, मथुरा) ।

: ६ :

कपट-मित्रम्

(हितोपदेशात्)

[हितोपदेश पञ्चतन्त्र के समान उपदेश-प्रधान कथाओं का ग्रन्थ है। इनकी रचना नारायण पण्डित ने राजा धवलचन्द्र के आश्रय में की। इनका समय चौदहवीं शताब्दी के आसपास का है।

हितोपदेश की रचना पञ्चतन्त्र के आधार पर हुई है। इसमें चार परिच्छेद हैं—१. मित्रलाभ, २. सुहृद्-भेद, ३. विग्रह, ४. संधि। मित्रलाभ पञ्चतन्त्र के मित्रप्राप्ति तन्त्र से तथा सुहृद्-भेद पञ्चतन्त्र के मित्रभेद तन्त्र से मिलता है। बाकी दोनों परिच्छेद नये हैं। पञ्चतन्त्र के ही समान इसमें कथाएं गद्य में हैं जिनके बीच-बीच में नीति के श्लोक दिये गये हैं।

हितोपदेश बहुत लोकप्रिय हुआ। संस्कृत के विद्यार्थियों को आरम्भ मे प्रायः हितोपदेश ही पढ़ाया जाता रहा है। इसकी लेखन-शैली सुबोध होने के साथ-साथ मनोरंजक भी है।

संकलित अंश हितोपदेश के प्रथम परिच्छेद मित्रलाभ से लिया गया है।]

अस्ति मगध-देशे चम्पकवती नाम अरण्यानी। तस्यां चिरान् महता स्नेहेन मृग-काकौ निवसतः। स च मृगः स्वेच्छया भ्राम्यन् हृष्ट-पुष्टाङ्गः केनचित् शृगालेनावलोकितः। तं दृष्ट्वा शृगालोऽचिन्तयद्—आः! कथमेतन्मांसं सु-ललितं भक्षयामि? भवतु, विश्वासं तावदुत्पादयामि।

इत्यालोच्योपसृत्याब्रवीत्—मित्र! कुशलं ते? मृगेणोक्तम्—कस् त्वम्? स ब्रूते—क्षुद्रबुद्धि-नामा जम्बुकोऽहम्।

अत्रारण्ये बन्धु-हीनो मृतवन्निवसामि। इदानींत्वां मित्रमासाद्य पुनः स-बन्धुर् जीवलोकं प्रविष्टोऽस्मि। अधुना तवानुचरेण मया सर्वथा भवितव्यम्। मृगेणोक्तम्——एवमस्तु।

ततः पश्चादस्तंगते सवितरि भगवति मरीचि-मालिनि तौ मृगस्य वास-भूमिं गतौ। तत्र चम्पक-वृक्ष-शाखायां सुबुद्धि-नामा काको मृगस्य चिर-मित्रं निवसति। तौ दृष्ट्वा काकोऽवदत्—सखे चित्राङ्ग! कोऽयं द्वितीयः। मृगो ब्रूते—जम्बुकोऽयम्। अस्मत्सख्य-मिच्छन्नागतः। काको ब्रूते——मित्र! अकस्मादागन्तुना सह मैत्री न युक्ता। तथा चोक्तम्——

अज्ञात-कुल-शीलस्य वासो देयो न कस्यचित्।
मार्जारस्य हि दोषेण हतो गृध्रो जरद्गवः॥१॥

इत्याकर्ण्य स जम्बुकः सकोपमाह—मृगस्य प्रथम-दर्शन-दिने भवानप्यज्ञात-कुल-शील एव। तत् कथं भवता सहैतस्य स्नेहानु-वृत्तिरुत्तरोत्तरं वर्धते?

अयं निजः परो वेति गणना लघु-चेतसाम्।
उदार-चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥२॥

यथायं मृगो मम बन्धुस् तथा भवानपि। मृगोऽब्रवीत्—किम-नेनोत्तरोत्तरेण? सर्वैरेकत्र विश्रम्भालापैः सुखिभिः स्थीयताम्। यतः——

न कश्चित् कस्यचिन्मित्रं न कश्चित् कस्यचिद्रिपुः।
व्यवहारेण मित्राणि जायन्ते रिपवस्तथा॥३॥

काकेनोक्तम्——एवमस्तु। अथ प्रातः सर्वे यथाभिमत-देशं गताः।

एकदा निभृत शृगालो ब्रूते—सखे ! अस्मिन् वनैकदेश सस्य-पूर्ण क्षेत्रमस्ति । तदहं त्वां नीत्वा दर्शयामि । तथा कृते सति स मृग: प्रत्यहं तत्र गत्वा सस्यं खादति। अथ क्षेत्र-पतिना तद् दृष्टवा पाशो नियोजित: । अनन्तरं पुनरागतो मृगः पाशैर्बद्धोऽचिन्तयत् को मामितः काल-पाशादिव व्याध-पाशात् त्रातुं मित्रादन्यः समर्थ:? तत्रान्तरे जम्बुकस् तत्रागत्योपस्थितोऽचिन्तयत्—फलिता तावदस्माकं कपट-प्रबन्धेन मनोरथ-सिद्धि:। एतस्योत्कृत्यमानस्य मांसासृग्-लिप्तान्यस्थीनि मयावश्यं प्राप्तव्यानि । तानि बाहुल्येन भोजनानि भविष्यन्ति । मृगस् तं दृष्ट्वोल्लसितो ब्रूते—सखे ! छिन्द्धि तावन्मम बन्धनम् । सत्वरं त्रायस्व माम् । यत:—

आपत्सु मित्रं जानीयाद् युद्धे शूरमृण शुचिम् ।
भार्यां क्षीणेषु वित्तेषु व्यसनेषु च बान्धवान ।।४।।

अपरं च——

उत्सव यसने चव दुर्भिक्ष राष्ट्र-विप्लव ।
राज-द्वार श्मशाने च यस् तिष्ठति स बान्धव: ।।५।।

जम्बुको मुहुर्मुहुः पाशं विलोक्याचिन्तयत्—दृढस्तावदयं बन्ध:। ब्रूते च–सखे! स्नायु-निर्मिता एते पाशा:। तदद्य भट्टारक-वार कथमतान् दन्तः स्पृशामि । मित्र ! यदि चित्ते नान्यथा मन्यसे तदा प्रभाते यत् त्वया वक्तव्यं तत् कर्तव्यम् । इत्युक्त्वा तत्स-मीपम् आत्मानमाच्छाद्य स्थित: । अनन्तरं स काक: प्रदोष-काले मृगमनागतमबलोक्येतस्ततोऽन्विष्य, तथाविधं दृष्ट्बोवाच—— सखे ! किमेतत् ? मृगेणोक्तम्—अवधीरित-सुहृद्वाक्यस्य फल-मेतत् । तथा चोक्तम्——

सुहृदां हित-कामानां यः शृणोति न भाषितम् ।
विपत् संनिहिता तस्य, स नरः शत्रु-नन्दनः ।।६।।

काको ब्रूते—सखे वञ्चकः क्वास्ते ? मृगेणोक्तम्—मन्मांसार्थी तिष्ठत्यत्रैव ।

ततः काको दीर्घं निःश्वस्य प्राह—अरे वञ्चक ! किं त्वया पाप-कर्मणा कृतम ? यतः—

उपकारिणि विश्रब्धे शुद्धमतौ यः समाचरति पापम् ।
तं जनमसत्य-सन्धं भगवति वसुधे ! कथं वहसि ।।७।।
दुर्जनेन समं सख्यं प्रीतिं चापि न कारयेत् ।
उष्णो दहति चाङ्गारः शीतः कृष्णायते करम् ।।८।।
दुर्जनः प्रिय-वादी च नैतद् विश्वास-कारणम् ।
मधु तिष्ठति जिह्वाग्रे हृदि हालाहलं विषम् ।।९।।

अथ प्रभाते क्षेत्रपतिर् लगुड-हस्तस् तं प्रदेशमागच्छन् काकेनावलोकितः। तमालोक्य काकेनोक्तस्–सखे मृग ! त्वमात्मानं मृतवत् संदर्श्य वातेनोदरं पूरयित्वा पादान् स्तब्धीकृत्य तिष्ठ । यदाहं शब्दं करोमि तदा त्वमुत्थाय पलायिष्यसे । मृगस् तथैव काक-वचनेन स्थितः । ततः क्षेत्र-पतिना हर्षोत्फुल्ल-लोचनेन तथाविधो मृग आलोकितः। आः ! स्वयं मृतोऽसि–इत्युक्त्वा मृग बन्धनान्मोचयित्वा पाशान् ग्रहीतुं स-यत्नो बभूव। ततः काकशब्दं श्रुत्वा मृगः सत्वरमुत्थाय पलायितः। तमुद्दिश्य तेन क्षेत्रपतिना क्षिप्तेन लगुडेन शृगालो हतः। तथा चोक्तम्—

त्रिभिर्वर्षैस्त्रिभिर्मासैस् त्रिभिः पक्षैस्त्रिभिर्दिनैः ।
अत्युत्कटैः पाप-पुण्यैरिहैव फलमश्नुते ।।१०।।

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—
अरण्यानी, जीवलोक, सवितरि, विश्रम्भालाप, शत्रु-नन्दन, कृष्णायते।

(२) विपरीतार्थक शब्द बताओ—
वर्धते, निजः, विपद्, नन्दनः, उपकारिन्, उष्णः, बद्धः।

(३) 'पाना' अर्थ वाली जितनी धातुएँ जानते हो, उन सबको लिखो।
(धातुएँ उपसर्ग-रहित और उपसर्ग-सहित दोनों प्रकार की हो सकती हैं)।

(२)

(१) संधि करो—
मृगेण + उक्तम्, कश्चित् + शृगालः, इच्छन् + आयातः, मृगः + ब्रूते, मृगः + चरित, मृगः + आयाति, मृगः + करोति, त्रिभिः + वर्षैः।

(२) समास-विग्रह करो –
मृग-काको, स्वेच्छया, एतन्मांसं, पाप-पुण्यैः, स्नायु-निर्मिताः, अनागतम्, पाप-कर्मणा, अ-सत्य-सन्धम्, स-यत्नः।

(३) उपसर्ग, धातु और प्रत्यय का अलग-अलग निर्देश करो—
आलोच्य, उपसृत्य, उत्कृत्यमानः, उपस्थितः, अवधीरित, संनिहिता, उत्थाय।

(४) विधि कृदन्त बनाओ –
कृ, भू, दा, प्राप्, वच् गम्।

(५) ५१ से ६० तक की गिनती लिखो।

(६) निम्नलिखित रूपों के लिंग, वचन और विभक्तियों का निर्देश करो—
सवितरि, भगवति, आगच्छन्, अस्थीनि।

(७) निम्नलिखित रूप कहाँ के हैं ? उनमें कौनसी धातुएं हैं :—
स्थीयताम्, जायन्ते, त्रायस्व, छिन्द्धि, कृष्णायते, अश्नुते ।

(३)

(१) वाक्य-परिवर्तन करो —
सर्वैरेकत्र विश्रम्भालापैः सुखिभिः स्थीयताम् ।
मृगेणोक्तम्—मम्मांसार्थी तिष्ठत्यत्रैव ।

(२) मृग शृगाल को पहले-पहल अपने वासस्थान पर ले गया तब मृग और काक तथा शृगाल में जो बातचीत हुई उसे संवाद-रूप में अपने शब्दों में लिखो ।

(४)

(१) इस कथा से क्या-क्या शिक्षाएँ मिलती हैं ?
(२) सच्चे मित्र के क्या लक्षण हैं ? सच्चा मित्र जीवन के लिए क्यों आवश्यक है ?
(३) सच्ची मित्रता और कपट-मित्रता की और कोई कथाएँ जानते हो तो बताओ ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१ हितोपदेश—हिन्दी-अनुवाद सहित (निर्णयसागर प्रेस, बम्बई) ।
२. हितोपदेश—हिन्दी-अनुवाद (राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली) ।
३. बाल-हितोपदेश—(इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद) ।

: १० :

ऊर्जस्वलमुद्बोधनम्

(महाभारतात्)

[हिन्दू धर्म के ग्रन्थों में चार वेद, चार उपवेद, छह वेदांग, छह दर्शन, दो इतिहास, १८ पुराण और धर्मशास्त्र तथा तन्त्र-संहिताएँ हैं। दो इतिहासों में एक रामायण और दूसरा महाभारत है।

महाभारत संस्कृत-साहित्य का सबसे बड़ा ग्रंथ है। उसमें लगभग एक लाख श्लोक तथा १८ पर्व या खण्ड हैं। उसमें प्रधान कथा कौरवों और पांडवों की है, पर बीच-बीच में प्रसंगानुसार सैकड़ों गौण कथाएँ और अन्यान्य प्रसग आये हैं जिनमें नलोपाख्यान, सावित्र्युपाख्यान, भगवद्गीता जैसे बड़े-बड़े प्रसंग भी हैं।

महाभारत वास्तव में हिन्दू धर्म का विश्वकोष है। हिन्दू धर्म और संस्कृति से सम्बन्ध रखने वाला शायद ही कोई ऐसा विषय हो जिसका उल्लेख उसमें न हुआ हो। उसके सम्बन्ध में यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है—

यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।

अर्थात् जो इसमें है, वही दूसरे ग्रन्थों में है और जो इसमें नहीं है, वह कहीं नहीं है।

पुराणों की भांति महाभारत के रचयिता के रूप में भी व्यास ही प्रसिद्ध हैं। विद्वानों का मत है कि मूल महाभारत की (जिसका नाम संभवतः 'जय' काव्य था) रचना व्यास द्वारा हुई, उनके शिष्य वैशंपायन और सौति ने उसमें परिवर्धन किया। वैसे महाभारत में समय-समय पर बराबर परिवर्धन होता रहा है।

संकलित अंश महाभारत के पांचवें पर्व उद्योगपर्व से उद्धृत किया गया है। सौवीर के राजा संजय को सिन्धुराज से पराजित होना पड़ा

जिस पर वह हताश होकर बैठ गया। इस पर उसकी मनस्विनी माता विदुला ने उसे फटकारते हुए उत्तेजनापूर्ण शब्दों में उद्बोधित किया, जिसके फलस्वरूप संजय ने साहस किया और सिन्धुराज पर विजय पाने में सफल हुआ। विदुला का यह उद्बोधन प्रत्येक नवयुवक के पढ़ने योग्य है।]

(१)

विदुला नाम राजन्या जगर्हे पुत्रमौरसम्।
निर्जितं सिन्धु-राजेन शयानं दीन-चेतसम् ॥१॥

(२)

उत्तिष्ठ हे कापुरुष! मा शेष्वैवं पराजितः।
अमित्रान् नन्दयन् सर्वान् मित्राणां चापि शोकदः ॥२॥
अलातं तिन्दुकस्येव मुहूर्त्तमपि हि ज्वल।
मा तुषाग्निरिवानर्चिर् धूमायस्व जिजीविषुः ॥३॥
मुहूर्त्तं ज्वलितं श्रेयो न च धूमायितं चिरम् ॥४॥
उद्भावयस्व वीर्यं वा तां वा गच्छ ध्रुवां गतिम्।
धर्मं पुत्राग्रतः कृत्वा किं निमित्तं हि जीवसि ॥५॥
श्रुतेन तपसा वापि श्रिया वा विक्रमेण वा।
जनान् योऽभिभवत्यन्यान् कर्मणा हि स वै पुमान् ॥६॥
निरमर्षं निरुत्साहं निर्वीर्यमरि-नन्दनम्।
मा स्म सीमन्तिनी काचिज् जनयेत पुत्रमीदृशम् ॥७॥
मा धूमाय ज्वलात्यन्तमाक्रम्य जहि शात्रवान्।
ज्वल मूर्धन्यमित्राणां मुहूर्त्तमपि वा क्षणम् ॥८॥

एतावानेव पुरुषो यदमर्षी यदक्षमी ।
क्षमावान निरमर्षश्च नैव स्त्री न पुनः पुमान ॥९॥

(३)

भृत्यैर्विहीयमानानां पर-पिण्डोपजीविनाम् ।
कृपणानामसत्त्वानां मा वृत्तिमनुवर्तिथाः ॥१०॥
अनु त्वा तात ! जीवन्तु ब्राह्मणाः सुहृदस्तथा ।
पर्जन्यमिव भूतानि, देवा इव शत क्रतुम् ॥११॥
यमाजीवन्ति पुरुषं सर्व-भूतानि संजय !
पक्वं द्रुममिवासाद्य तस्य जीवितमर्थवत् ॥१२॥
यस्य शूरस्य विक्रान्तैरेधन्ते बान्धवाः सुखम् ।
त्रिदशा इव शक्रस्य साधु तस्येह जीवनम् ॥१३॥
स्व-बाहु-बलमाश्रित्य योऽभ्युज्जीवति मानवः ।
स लोके लभते कीर्तिं परत्र च शुभां गतिम् ॥१४॥

(४)

सन्ति वै सिन्धु-राजस्य सतुष्टा न तथा जनाः ।
अनुदुष्येयुरपरे पश्यन्तस्तव पौरुषम् ॥१५॥
तैः कृत्वा सह संघातं गिरि-दुर्गालयं चर ।
काले व्यसनमाकाङ्क्षन् नैवायमजरामरः ॥१६॥
संजयो नामतश्च त्वं न च पश्यामि तत् त्वयि ।
अन्वर्थ-नामा भव मे पुत्र ! मा व्यर्थ-नामकः ॥१७॥

(५)

नातः पापीयसीं काञ्चिदवस्थां शम्बरोऽब्रवीत् ।
यत्र नैवाद्य न प्रातर् भोजनं प्रतिदृश्यते ॥१८॥
दारिद्र्यमिति यत् प्रोक्तं पर्याय-मरणं हि तत् ॥१९॥
यदि त्वामनुपश्यामि परस्य प्रिय-वादिनम् ।
पृष्ठतोऽनुव्रजन्तं वा का शान्तिर् हृदयस्य मे ॥२०॥
नाऽस्मिन् जातु कुले जातो गच्छेद्यो‍ऽन्यस्यपृष्ठतः ।
न त्वं परस्यानुचरन् तात ! जीवितुमर्हसि ॥२१॥
उद्यच्छेदेव न नमेद् उद्यमो ह्येव पौरुषम् ।
अप्यपर्वणि भज्येत न नमेदिह कस्यचित् ॥२२॥
अकुर्वन्तो हि कर्माणि कुर्वन्तो निन्दितानि च ।
सुखं नैवेह नामुत्र लभन्ते पुरुषाधमाः ॥२३॥
उत्थातव्यं जागृतव्यं योक्तव्यं भूति-कर्मसु ।
भविष्यतीत्येवं मनः कृत्वा सततमव्यथैः ॥२४॥

अभ्यास

(१)

(१) शब्दों के अर्थ लिखो—
राजन्या, अलात, अनर्चि, जिजीविषु, सीमन्तिनी, पुमान्, शतक्रतु, परत्र, पर्याय-मरण, अमुत्र, उद्यच्छेत् ।

(२) शत्रु और आकाश के अधिक से अधिक पर्याय-शब्द लिखो ।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—
शैष्वैवं, निरमर्षः, काचिज्जनयेत्, गच्छेद् योन्यस्य, उद्यच्छेदेव ।

(२) समास-विग्रह करो—

कापुरुषः, शोकदः, अमित्रान्, अनर्चिः, निरुत्साहं, असत्त्वानाम्, स्वबाहुबलम्, अन्वर्थनामा, पुरुषाधमाः ।

(३) प्रकृति और प्रत्यय अलग-अलग करके बताओ—

शयानं, पराजितः, नन्दयन्, नन्दनम्, विहीयमानः, जीवनम्, पश्यन्तः, दारिद्र्यम्, अनुव्रजन्तम्, उत्थातव्यं, योक्तव्यं, मतिः ।

(४) कर्मवाच्य का भूत-कृदन्त किस प्रकार बनाया जाता है? भूत-कृदन्त के ५ उदाहरण लिखो ।

(३)

(१) विदुला के उपदेश को संस्कृत में संक्षेप में लिखो ।

(४)

(१) मुहूर्त्तं ज्वलितं श्रेयो न च धूमायितं चिरम्—इस कथन के भाव को विस्तृत करके लिखो ।

(२) दारिद्र्य की निन्दा के जो पद्य (हिन्दी, संस्कृत या अन्य भाषाओं के) याद हों, उनको लिखो ।

(३) अप्यपर्वणि भज्येत न नमेदिह कस्यचित् ।
क्षमावान् निरमर्षश्च नैव स्त्री न पुनः पुमान् ।
इन कथनों से आप कहाँ तक सहमत हैं?

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. महाभारत—संस्कृत, उद्योगपर्व ।
२. महाभारत—हिन्दी-अनुवाद (इण्डियन प्रेस अथवा रामनारायणलाल)।
३. भारतीय उपाख्यानमाला—(रामनारायणलाल, इलाहाबाद) ।
४. संक्षिप्त हिन्दी महाभारत—महावीरप्रसाद द्विवेदी (इण्डियन प्रेस) ।
५. विदुलोपाख्यान—हिन्दी-टीका सहित (चौखंभा संस्कृत सीरीज, वाराणसी) ।

। ११ ।

परशुरामस्य कोपः

(प्रसन्नराघवात्)

[प्रसन्नराघव संस्कृत का बहुत प्रसिद्ध नाटक है जिसमें सात अंकों में रामायण की कथा को नाटक का रूप दिया गया है। इसके लेखक का नाम जयदेव है जो गीतगोविन्द-कर्ता जयदेव से भिन्न है। उसका समय निश्चित रूप से ज्ञात नहीं, पर वह चौदहवीं शताब्दी से पूर्व का है। प्रसन्नराघव की शैली प्रसाद-गुण-मयी है। हिन्दी के तुलसीदास और केशवदास जैसे कवियों को इस नाटक ने बहुत प्रभावित किया। दोनों ने उसके अनेक प्रसंगों और भावों को अपनी रचनाओं में अपनाया है।

संकलित अंश नाटक के चतुर्थ अंक से लिया गया है। महादेव के धनुष का तोड़ा जाना सुनकर परशुराम क्रुद्ध हो उठते हैं। उसी का चित्रण इस दृश्य में है।]

(ततः प्रविशति जामदग्न्यः)

जामदग्न्यः--(साटोपं परिक्रम्य) अहो धृष्टता जनकस्य यदयं हर-चापारोपणेन कन्या-दानं प्रतिजानीते ! (परशुं विलोक्य) अलम् अस्मिन्नुपेक्षया। मनोरथोपनीत-जामातृ-भुज-बलावलेप-दुर्ललितः खल्वयम्। (विलोक्य) कथमयं शतानन्द-शिष्यस् ताण्ड्यायनः ?

(ततः प्रविशति ताण्ड्यायन)

ताण्ड्यायनः—भगवन् ! अभिवादये।

जामदग्न्यः—आयुष्मान् भूयाः। कथय तावत्। अपि नाम भवदुपाध्याय-यजमानस्य निवृत्ता हर-चापारोपण-श्रद्धा ?

ताड्ण्यायनः—निवृत्ता ।

जामदग्न्यः—(सहर्षम्) निवृत्ता ?

ताण्डयायनः—भगवन् ! निवृत्ता सहैव चापेन ।

जामदग्न्यः—(स-संभ्रमम्) किमात्थ ? सहैव चापेन निवृत्ता इति ?

ताण्ड्यायनः—अथ किम् ।

जामदग्न्यः—स्फुटं कथय तावत् किं वृत्तमिति ।

ताण्ड्यायनः—कस्यचिद्—

अखण्ड-चण्डिमोद्दण्ड-भुज-दण्ड-निपीडितम् ।
भगवन् भृगु-मार्तण्ड ! भग्नं भर्ग-शरासनम् ॥१॥

जामदग्न्यः—(सक्रोधम्) कस्य ?

ताण्ड्यायनः—

सुबाहु - मारीच - पुरःसरा अमी
निशाचराः कौशिक-यज्ञ-घातिनः ।
वशे स्थिता यस्य…

जामदग्न्यः—अलम् । अतः परं ज्ञातः खलु खलानामग्रणीर् निशाचर-ग्रामणीः ।

ताण्ड्यायनः—(स्वगतम्) कथं दशकण्ठेन धनुर्भग्नमिति प्रतीतं भगवता ? भवतु तावत् ।

जामदग्न्यः—(सक्रोधम्) अनुचितमुदासितुमेतस्मिन् कृतापसि रक्षसि । तदिदानीं—

दक्षिणस्याम्बुधेर्मध्ये कृत्वा कोङ्कणमष्टमम् ।
मद्बाण जन्मा दहनो लङ्कातङ्काय जायताम् ॥२॥

(इति साटोपं परिक्रामति)

ताण्ड्यायनः—(स्वगतम्) दिष्टया स्वस्ति छात्रियकुलाय।

(नेपथ्ये)

अहो नियोगिनः! कृत-विवाह-मङ्गलयोः सीता-रामचन्द्रयोः स्वस्ति-वाचनिका द्विजा आहूयन्ताम्।

जामदग्न्यः—(परिवृत्य सक्रोधम्) आः ब्रह्म-बन्धो! कथमलीक-दशकण्ठ-कीर्ति-दानेन प्रतारितोऽस्मि! नन्वयमन्यः कोऽपि जनक-जामाता।

ताण्ड्यायनः—भगवन्! मम को वापराधः? अर्धोक्त एव भगवता भ्रान्तम्। मयापि संभ्रान्तम्।

जामदग्न्यः—तन्निःशेषं तावत् कथय।

ताण्ड्यायनः—

···शराग्र-वर्तिनः
प्रताप - लेशस्य गताः पराभवम् ॥३॥

जामदग्न्यः—कः पुनरयं मारीच-दमनः?

ताण्ड्यायनः—

य ऋष्य-शृङ्ग-चरु-भाग-भुवः कुमाराः
संजज्ञिरे दशरथस्य वधू-जनेन।
तेषामयं निरुपमः प्रथमः कुमारो
रामाभिधः कुशिकराज-तनूज-शिष्यः ॥४॥

जामदग्न्यः—(क्षणं विभाव्य सामर्षम्)

दुर्धर्षाः सुर-सिद्ध-किन्नर-नरैस्, त्यक्त-क्रमं, वक्रतां।
प्राप्ते यत्र विधातरीव तरसा तिस्रोऽपि दग्धाः पुरः॥

तद् भग्नं यदि राघवेण शिशुना चण्डी-पतेः कार्मुकं ।

ताण्ड्यायनः—(स्वगतम्) किमधुना वक्ष्यति ?

जामदग्न्यः—

तन् मग्नं कुलमेव तर्कय रघोर् मच्छस्त्रधाराम्भसि ॥५॥

ताण्ड्यायनः—संरब्धोऽयं भगवान्। तमिमं वृत्तान्तमुपाध्यायस्य कथयामि।

(इति निष्क्रान्तः)

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—

आटोप, अलं, उपनीत, दुर्ललित ग्रामणीः, रक्षसि; दिष्ट्या, स्वस्ति; नियोगिनः, संभ्रान्तम्, अम्भस्।

(२) 'हुआ' अर्थ को प्रकट करने वाले संस्कृत शब्द लिखो।

(२)

(१) संधि करो—

द्विजाः + आहूयन्ताम्, ननु + अयम्, वधं + उक्ते + एव, एषः + मत् + शस्त्रधारा + अम्भसि।

(२) समास करो—

कन्यायाः दानम् कृतं आगः येन सः।

(३) समास-विग्रह करो—

भुज-दण्ड-निपीडितम्, कृत-विवाह-मंगलयोः, रामाभिधः, त्यक्त-क्रमं, शस्त्र-धाराम्भसि।

(४) कर्तृवाच्य का भूत-कृदन्त कैसे बनाया जाता है ? भूत-कृदन्त के पांच उदाहरण लिखो।

(५) एक, द्वि और त्रि के रूप लिखो।

(६) प्रकृति-प्रत्यय बताओ—

जामदग्न्यः, ताण्ड्यायनः, आयुष्मान्, वक्रतां, धृष्टता, उपेक्षा, निवृत्ता, प्रतीतं, उदासितुं, दानं, प्रेरितः, दग्धा। ।

(७) ये रूप कहाँ के हैं (धातु, काल, पुरुष और वचन बताओ)—

प्रतिजानीते, अभिवादये, आत्थ, जायताम्, संजज्ञिरे ।

(३)

(१) श्लोक ५ का संस्कृत में अर्थ लिखो ।

(२) वाक्यों में प्रयुक्त करो—

अलम्, स्वस्ति, तावत्, अपि नाम, अथ किम्, दिष्ट्या ।

(४)

(१) परशुराम का जनक पर कुपित होने का क्या कारण था ? वे रावण पर क्यों कुपित हुए ?

(२) परशुराम ने यह कैसे समझा कि धनुष रावण ने तोड़ा ? क्या ताण्ड्यायन के कथन से रावण का अर्थ निकल सकता है ?

(३) मारीच, ऋष्यशृंग और त्रिपुर के विषय में क्या जानते हो ?

(४) अपने साथियों के साथ मिलकर इस नाट्यांश का अभिनय करो।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. प्रसन्नराघव नाटक—संस्कृत (निर्णयसागर प्रेस)।
२. वही—with notes by S. M. Paranjape (Poona).
३. वही—हिन्दी-टीका (चौखम्भा संस्कृत सीरीज, वाराणसी)।

: १२ :

विद्वान् परिवारः

(भोज-प्रबन्धात्)

[भोज-प्रबन्ध में धारा के विद्या-प्रेमी राजा भोज से सम्बद्ध कथाओं का संग्रह है। इसकी रचना बल्लाल पंडित ने सोलहवीं शताब्दी में की। लेखक के समय तक भोज के सम्बन्ध में जनता में अनेक जन-श्रुतियाँ प्रचलित हो गयी थीं। लेखक ने इस ग्रन्थ में उनका संग्रह कर दिया है। इतिहास की दृष्टि से ग्रन्थ का कोई मूल्य नहीं है। भोज-प्रबन्ध में राजा भोज को संस्कृत-साहित्य के प्रेमी तथा उदार आश्रयदाता के रूप में चित्रित किया गया है जो कवियों को एक-एक श्लोक पर लाख-लाख मुद्राएँ पुरस्कार दिया करता था। संस्कृत के प्रायः सभी प्रसिद्ध कवियों को लेखक ने भोज के दरबार में एकत्र कर दिया है। इससे ग्रन्थ मनोरंजक बन गया है पर उसका ऐतिहासिक मूल्य नष्ट हो गया है।

संकलित अंश में भोज के दरबार में आये हुए ब्राह्मण-परिवार की कथा है जिसमें पिता, माता, पुत्र और पुत्रवधू ये चार व्यक्ति हैं। चारों-के-चारों संस्कृत के विद्वान् हैं और संस्कृत में श्रेष्ठ काव्य-रचना करने की प्रतिभा रखते हैं।]

कदाचित् द्वारपालः प्राह—धारेन्द्र ! दूरदेशादागतः कश्चिद् विद्वान् द्वारि तिष्ठति तत्पत्नी च तत्पुत्रश्च सपत्नीकः। राजा चिन्तयामास—अहो गरीयसी शारदा-प्रसाद-पद्धतिः। ततो राजा विद्वत्कुटुम्बं पुरतः स्थितं वीक्ष्य ब्राह्मणं प्राह—

क्रिया-सिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे।

वृद्ध-द्विज: प्राह—

घटो जन्म-स्थानं, मृग-परिजनो भूर्ज-वसनो
वने वासः, कन्दादिकमशनमेवंविध-गुण: ।
अगस्त्य: पाथोधिं यदकृत कराम्भोज-कुहरे
क्रिया-सिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥१॥

ततो राजा बहु-मूल्यान् षोडश-मणींस् तस्मै ददौ । ततस् तत्पत्नीं प्राह—अम्ब ! त्वमपि पठ ।

देवी पठति—

रथस्यैकं चक्रं, भुजग-यमता: सप्त-तुरगा,
निरालम्बो मार्गश् चरण-विकल: सारथिरपि ।
रविर्यात्येवान्तं प्रतिदिनमपारस्य नभसः
क्रिया-सिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥२॥

राजा तुष्ट: सप्त रथांश्च तस्यै ददौ । ततो विप्र-पुत्रं प्राह—विप्र-सुत ! त्वमपि पठ ।

विप्र-सुत: पठति—

विजेतव्या लङ्का, चरण-तरणीयो जल-निधिर्
विपक्षः पौलस्त्यो रण-भुवि सहायाश्च कपयः ।
पदातिर्मर्त्योऽसौ सकलमवधीद् राक्षस-कुलं
क्रिया-सिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥३॥

तुष्टो राजा विप्र-सुतायाष्टादश-गजेन्द्रान् प्रादात् । ततः सुकुमार-मनोज्ञां विप्र-स्नुषां वीक्ष्य नूनं भारत्या: कापि लीला-कृतिरियम् इति चेतसि नमस्कृत्य राजा प्राह—मात: ? त्वमप्याशिषं वद ।

विप्र-स्नुषा प्राह—देव ! शृणु—

धनुः पौष्पं, मौर्वी मधुकर-मयी, चञ्चल-दृशां
दृशां कोणो बाणः, सुहृदपि जडात्मा हिम-करः ।
स्वयं चैकोऽनङ्गः, सकल-भुवनं व्याकुलयति
क्रिया-सिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ।।४।।

चमत्कृतो राजा लीलादेवी-भूषणानि सर्वाण्यादाय तस्यै ददौ । अनर्घ्यान् सुवर्ण-मौक्तिक-वैदूर्य-प्रवालांश् च प्रददौ ।

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ बताओ—

सत्त्वे, उपकरणे, अशनं, चक्रं, यमिताः, विकलः, सहायाः, पदातिः ।

(२) मूल्यवान् धातुओं और रत्नों के नाम लिखो ।

(३) सूर्य और समुद्र के जितने पर्याय बता सको बताओ ।

(२)

(१) समास-विग्रह करो—

विद्वत्कुटुम्बं, जन्म-स्थानं, पाथोधि, भुजग-यमिताः, चरणविकलः, प्रतिदिनम्, जडात्मा, हिमकरः, अनंगः ।

(२) व्युत्पत्ति करो (उपसर्ग, धातु या शब्द, प्रत्यय आदि अलग-अलग बताओ)—

गरीयसी, पौलस्त्यः, पौष्पं, अनर्घ्यान्, सिद्धिः, वृद्धः, स्थानम्, वासः विजेतव्या ।

(३) संधि-विच्छेद करो —

मणींस्तस्मै, ततस्तत्, रविर्यात्येवान्तं, सहायाश्च, चैकोनङ्गः सर्वाण्यादाय, अनर्घ्यांश्च ।

(४) परस्मैपद धातु से वर्तमान कृदन्त कैसे बनाया जाता है ? वर्तमान कृदन्त के ५ उदाहरण लिखो।

(५) संस्कृत में ११ से २० तक की गिनती लिखो।

(३)

(१) संस्कृत रूपान्तर लिखो—
दोनों, पहला, चौथा, छठा, दसवाँ, बारहवाँ, बीसवाँ सौवाँ।

(२) विप्र-पुत्र ने जो श्लोक कहा, उसका भाव संस्कृत में लिखो।

(४)

(१) चारों समस्यापूर्तियाँ पूर्ति करने वालों के अनुरूप हैं। किस प्रकार ?

(२) राजा भोज के सम्बन्ध में आप क्या जानते हैं ?

(३) अगस्त्य कौन थे ? उनके सम्बन्ध की क्या-क्या कथाएँ आपको ज्ञात हैं ?

(४) 'गरीयसी शारदा-प्रसाद-पद्धति:' और 'भारत्या: कापि लीला-कृतिरियम्' इन वाक्यों का भाव समझाओ।

(५) क्रिया-सिद्धि: सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे—इस उक्ति को लेकर छोटा-सा निबन्ध लिखो।

(६) उपर्युक्त उक्ति का समर्थन करने वाली जो कथाएँ या घटनाएँ जानते हों, उनको लिखो।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. भोज-प्रबन्ध—संस्कृत टीका, हिन्दी-अनुवाद आदि सहित (मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी)।

२. वही—हिन्दी टीका (चौखम्भा)।

३. बाल-भोज-प्रबन्ध—(इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद)।

: १३ :

कृतानि पुत्रैरकृतानि पूर्वैः

(बुद्ध चरितात्)

[बौद्ध धर्म में अश्वघोष का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे सम्राट कनिष्क के समकालीन थे। कनिष्क के समय बौद्ध विद्वानों की जो संगीति (महासभा) एकत्र हुई थी, उसका संचालन अश्वघोष की अध्यक्षता में हुआ था।

बौद्ध धर्म के विद्वान् और महान् दार्शनिक होने के साथ-साथ अश्वघोष उच्च कोटि के कवि भी थे। उन्होंने दो महाकाव्य लिखे। बुद्ध-चरित में भगवान् बुद्ध का चरित्र वर्णित किया गया है। इसमें २८ सर्ग थे पर इस समय १४ ही उपलब्ध हैं। इसके अनुवाद चीनी तथा तिब्बती भाषाओं में हुए जो पूरे उपलब्ध हैं। उनका दूसरा काव्य सौन्दरानन्द है जिसमें बुद्ध के सौतेले भाई नन्द और उसकी पत्नी सुन्दरी की कथा है। इसमें १८ सर्ग हैं। इन काव्यों के अतिरिक्त अश्वघोष ने नाटक भी लिखे थे।

अश्वघोष के काव्य की विशेषता उसका प्रसाद गुण है। शैली सर्वत्र स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण है। इन काव्यों की रचना में कवि का उद्देश्य रोचक शैली में बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना था। अपने इस उद्देश्य में कवि को पूरी सफलता मिली है। रूखे दार्शनिक तत्त्वों को घरेलू परिचित उदाहरणों के द्वारा समझाने में वह खूब ही सफल हुआ है।

संकलित अंश बुद्ध-चरित से लिया गया है। इसमें बड़े ओजस्वी शब्दों में यह कहा गया है कि पीछे आने वाले अपने पूर्वजों से बढ़कर हो सकते हैं और हुए हैं। पूर्वज जो काम नहीं कर सके, वह काम वंशजों ने

कर दिखाया है; समाज में जो यह भावना घर किये हुए है कि पहले जो कुछ हो गया, वैसा अब नहीं हो सकता, अब गिरने के दिन हैं, चढ़ने के नहीं, वह बिलकुल निराधार है; सुवर्ण-युग अतीत में ही नहीं, भविष्य में भी हो सकता है। यह अश्वघोष का क्रांतिकारी संदेश है जो प्रत्येक नवयुवक के मनन करने योग्य है।]

(१)

यद् राज-शास्त्रं भृगुरङ्गिरा वा
न चक्रतुर् वंश-करावृषी तौ।
तयोः सुतौ तौ च ससर्जतुस् तत्
कालेन शुक्रश्च बृहस्पतिश्च ॥

(२)

सारस्वतश् चापि जगाद वदं
नष्टं पुनर यं ददृशुर्न पूर्वे।
व्यासस् तथैनं बहुधा चकार
न यं वसिष्ठः कृतवान्न शक्तिः ॥

(३)

वाल्मीकि-नादश्च ससर्ज पद्यं
जग्रन्थ यन्न च्यवनो महर्षिः।
चिकित्सितं यच्च विवेद नात्रिः
पश्चात् तदात्रेय ऋषिर्जगाद ॥

(४)

यच्च द्विजत्वं कुशिको न लेभे
तद् गाधिनः सूनुरवाप राजन् !

वेलां समुद्रे सगरश्च दध्रे
नैक्ष्वाकवो यां प्रथमं बबन्धुः ॥

(५)

आचार्यकं योग-विधौ द्विजाना-
मप्राप्तमन्यैर् जनको जगाम ।
ख्यातानि कर्माणि च यानि शौरेः
शूरादयस् तेष्ववला बभूवुः ॥

(६)

तस्मात् प्रमाणं न वयो न कालः
कश्चित् क्वचिच्छ्रैष्ठ्यमुपैति लोके ।
राज्ञामृषीणां च हि तानि तानि
कृतानि पुत्रैरकृतानि पूर्वैः ॥

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—

चक्रतुः, कालेन, जगाद, जग्रन्थ, विवेद, अवाप, वेलां दध्रे, आचार्यक, शौरिः, प्रमाण, पूर्वैः ।

(२) समानार्थक शब्द लिखो—

राजशास्त्रं, द्विजत्वं, ख्यातानि, अबलाः ।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—

पुनर्यम्, तथैनं, कृतवान्न, यच्च, तेष्वबलाः ।

(२) समास करो—
तयोः सुतौ, शुक्रश्च बृहस्पतिश्च, महान् ऋषिः, गाधिनः सूनुः।

(३) समास-विग्रह करो—
वंश-करौ, योग-विधौ, द्विजानां, अप्राप्तं, अबलाः।

(४) प्रकृति-प्रत्यय बताओ—
वाल्मीकिः, सारस्वतः, चिकित्सितं, आन्वयः, कृतवान्, द्विजत्वं, ऐक्ष्वाकवः, ख्यातानिः, शौरेः, श्रेष्ठ्यम्।

(५) भविष्यत्कृदन्त किस प्रकार बनता है? भविष्यत्कृदन्त के ५ उदाहरण लिखो।

(६) रूप लिखो—
भृगु—षष्ठी विभक्ति, अंगिरस्—सप्तमी विभक्ति, बृहस्पति—तृतीया विभक्ति, कृ धातु—लङ् अन्यपुरुष, सृज् धातु—लृट् उत्तमपुरुष, विद् धातु—लट् मध्यमपुरुष।

(३)

(१) इस पाठ का सार अपने शब्दों में लिखो।

(२) परोक्षभूत की क्रियाओं को अनद्यतन-भूत की क्रियाओं में परिवर्तित करो।

(४)

(१) इस पाठ से क्या शिक्षा मिलती है?

(२) जो कार्य पूर्वज नहीं कर सके, उन्हें पीछे आने वालों ने किया; इसके समर्थन में कुछ और उदाहरण दो।

(३) बाप से बेटा बड़ा—यह कहावत कहाँ तक सार्थक है? उदाहरण देकर अपने पक्ष का समर्थन करो।

(४) 'पहले जो कुछ हो गया, वैसा अब नहीं हो सकता'—इस कथन की सत्यता की परीक्षा करो। उन्नति का कारण काल है या और कुछ ? यदि और कुछ है तो वह क्या है ?

(५) इस पाठ में जिन ऋषियों और राजाओं के नाम आये हैं, उनकी कथाएँ रामायण, महाभारत अथवा पुराणों में पढ़ो।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. बुद्ध-चरित—जॉन्स्टन-सम्पादित।
२. बुद्ध-चरित—अंग्रेजी भाषान्तर, जॉन्स्टन-कृत।
३. बुद्ध-चरित—हिन्दी-अनुवाद, सूर्यनारायण चौधरी कृत।
४. बुद्ध-चरित—हिन्दी-अनुवाद (चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी)।
५. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी—गुलेरी-ग्रन्थ, भाग १, च्यवन ऋषि का रामायण नामक निबन्ध (ना. प्र. सभा)।

: १४ :

पराक्रमी बालः

(उत्तर-रामचरितात्)

[संस्कृत-नाटककारों में भवभूति का नाम कालिदास के साथ ही लिया जाता है। वे कन्नौज के राजा यशोवर्मा के युग में हुए, जिसका समय विक्रम की आठवीं शताब्दी है। एक अन्य मतानुसार भवभूति ही उम्बेकाचार्य थे, जो मीमांसा के प्रसिद्ध विद्वान और कुमारिलभट्ट के शिष्य थे।

भवभूति को अपने जीवन-काल में उपयुक्त साहित्यिक सम्मान नहीं मिला। इस विषय में उनका यह श्लोक प्रसिद्ध है—

ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां
जानन्तु न किमपि, तान् प्रति नैष यत्नः।
उत्पस्यतेऽस्ति मम कोऽपि समान-धर्मा
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी॥

भवभूति के तीन ग्रन्थ मिलते हैं—१. उत्तर-रामचरित, २. महावीर-चरित, ३. मालती-माधव। ये तीनों ही नाटक हैं। मालती-माधव की कथा कवि-कल्पित है। महावीर-चरित राम के चरित्र को लेकर लिखा गया है। तीनों में श्रेष्ठ उत्तर-रामचरित है, जिसमें सीता वनवास से आरम्भ करके राम का पिछला चरित्र वर्णित है। कथा वाल्मीकीय रामायण की है पर कवि ने उसमें पर्याप्त फेर-फार किया है। रामायण की कथा दुःखान्त है, पर संस्कृत-नाटकों की प्रथानुसार कवि ने उसे सुखान्त बना दिया है—सीता और राम के संयोग के साथ नाटक की समाप्ति होती है।

उत्तर-रामचरित करुण-रस-प्रधान नाटक है। करुण रस का चित्रण करने में भवभूति अद्वितीय हैं। भाषा पर कवि का अपूर्व अधिकार है।

संस्कृत की एक उक्ति के अनुसार उत्तर-रामचरित में भवभूति कालिदास से भी बढ़ जाते हैं—

उत्तरे राम-चरिते भवभूतिर्विशिष्यते ।

संकलित अंश उत्तर-रामचरित के चतुर्थ अंक से उद्धृत किया गया है। उसमें बचपन से ही पराक्रमी बालक लव की तेजस्विता का प्रभावशाली चित्रण हुआ है।]

बटवः—(प्रविश्य संभ्रान्ताः) कुमार ! अश्वोऽश्व इति कोऽपि भूत-विशेषो जनपदेषु श्रूयते, सोऽयमधुनास्माभिः प्रत्यक्षीकृतः ।

लवः—अश्व इति पशु-समाम्नाये साङ्ग्रामिके च पठ्यते तद् ब्रूत कीदृशः ?

बटवः—श्रूयताम्—

पश्चात् पुच्छं वहति विपुलं, तच्च धूनोत्यजस्रं,
दीर्घ-ग्रीवः स भवति, खुरास् तस्य चत्वार एव ।
शष्पाण्यत्ति, प्रकिरति शकृत्-पिण्डकानाम्र-मात्रान्,
किं व्याख्यातैर्, व्रजति स पुनर् दूरमेह्येहि यामः ॥१॥

[इति उपसृत्याजिने हस्तयोश्चाकर्षन्ति]

बटवः—पश्यतु कुमारस् तदाश्चर्यम् ।

लवः—दृष्टमवगतं च नूनमाश्वमेधिकोऽयमश्व इति ।

बटवः—कथं ज्ञायते ?

लवः—ननु मूर्खाः ? पठितमेव युष्माभिस् तत्काण्डे । किं न पश्यथ, प्रत्येकं शत-संख्याः कवचिनो दण्डिनो निषङ्गिणश्च रक्षितारस्, तत्प्रायमेव बलमिदमपि दृश्यते । यदि इह न प्रत्ययस्, तद गत्वा पृच्छत ।

बटवः—भोः ! भोः ! किंप्रयोजनोऽयमश्वः परिवृतः पर्यटति ।

लवः—(सस्पृहमात्मगतम्) अये ! अश्वमेध इति विश्व-विजयिनां क्षत्रियाणामूर्जस्वलः सर्व-क्षत्रिय-परिभावी महान् उत्कर्ष-निकषः ।

[नेपथ्ये]

अयमश्वः पताकेयमथवा वीर-घोषणा ।
सप्तलोकैक-वीरस्य दशकण्ठ-कुल-द्विषः ॥२॥

लवः—(सव्यथमिव) अहो ! संदीपनानि अक्षराणि ।

बटवः—किमुच्यते ? प्राज्ञः खलु कुमारः ।

लवः—भोः ! भोः ! तत् किमक्षत्रिया पृथ्वी यदेवमुद्धतमुद्घोष्यते !

[नेपथ्ये]

अरे ! महाराजं प्रति कुतः क्षत्रियाः ?

लवः—धिग् जाल्मान्—

यदि नो सन्ति सन्त्वेव, केयमन्या विभीषिका ।
किमुक्तैः, संनिपत्यैव पताकां वो हराम्यहम् ॥३॥

भो भो बटवः ! परिवृत्य लोष्ठैरभिघ्नन्तो नयत एनमश्वम् । एष रोहितानां मध्ये वराकश्चरतु ।

[प्रविश्य सक्रोध-दर्पः पुरुषः]

धिक् चापलम् ! किमुक्तवानसि ? तीक्ष्ण-नीरसा ह्यायुधीय-श्रेणयः शिशोरपि दृप्तां वाचं न सहन्ते । राजपुत्रश् चन्द्रकेतुररि-मर्दनः सौम्य - पूर्वारण्य- दर्शन - कौतूहलाक्षिप्त - हृदयो न यावदायाति तावत् त्वरितमनेन तरु-गहनेनापसर्पत ।

बटवः——कुमार ! कृतमनेनाश्वेन, तर्जयन्ति विस्फुरित-शस्त्राः कुमारमायुधीय-श्रेणय, दूरे चाश्रमपदमितस्, तदेहि हरिण-प्लुतैः पलायामहे ।

लवः——(स्मितं कृत्वा) किं नाम विस्फुरन्ति शस्त्राणि ?

[धनुरारोपयति]

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ लिखो—

संभ्रान्ताः, साङ्ग्रामिक, ऊर्जस्वल, निकष, जाल्म, विभीषिका, रोहित, वराक, आयुधीय ।

(२) जितने आयुधों के नाम बता सको, बताओ ।

(३) अश्व के अधिक-से-अधिक पर्याय शब्द बताओ ।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—

अश्वोऽश्वः, एह्येहि, संनिपत्यैव, वराकश्चरतु ।

(२) समास-विग्रह करो—

दीर्घग्रीवः, शत-संख्याः, किंप्रयोजनः राज-पुत्रः ।

(३) प्रकृति-प्रत्यय बताओ—

साङ्ग्रामिकः, आश्वमेधिकः, कवचिनः; निषंगिणः, चापलं, रक्षितारः संदीपनानि, संनिपत्य, अभिघ्नन्तः, उक्तवान्, दृप्तां ।

(४) ये रूप किस धातु के, किस काल के और किस वचन के हैं—

अत्ति, धूनोति, पर्यटति, उद्घोष्यते, विस्फुरन्ति ।

(३)

(१) बटुओं ने घोड़े का जो वर्णन किया, उसे अपने शब्दों में लिखो

(२) श्लोक १ की प्रथम और तृतीय पंक्तियों का वाच्य-परिवर्तन करो।

(४)

(१) लव के चरित्र की विशेषताएँ बताओ।
(२) इस पाठ में हास्य और वीर रसों की व्यञ्जना करने वाले अंशों को बताओ।
(३) अश्वमेध यज्ञ क्यों किया जाता था? कैसे किया जाता था? किसी और अश्वमेध की कथा जानते हो? उसे किसने किया था?
(४) इस नाट्यांश का अभिनय करो।
(५) वाल्मीकि-रामायण में लव-कुश की कथा पढ़ो। वह इस नाटक की कथा से किस प्रकार भिन्न है? (तुलसीकृत रामायण का एक क्षेपक लव-कुश-काण्ड है, उसकी कथा नाटक की कथा से मिलती है)।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. उत्तर-रामचरित नाटक—संस्कृत (निर्णयसागर प्रेस)।
२. उत्तर-रामचरित—English Notes and Translation by Sankara Rama Shastri.
३. उत्तर-रामचरित—हिन्दी-अनुवाद, कविरत्न सत्यनारायण कृत।
४. उत्तर-रामचरित—संस्कृत टीका तथा हिन्दी-अनुवाद सहित (चौखम्भा)।
५. कालिदास और भवभूति—द्विजेन्द्रलाल राय।

: १५ :

सुभाषितानि (२)

श्रूयतां धर्म-सर्वस्वं श्रुत्वा चाप्यवधार्यताम् ।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ॥१॥
सारं सारं समुद्धृत्य व्यासस्य वचन-द्वयम् ।
परोपकारः पुण्याय, पापाय पर-पीडनम् ॥२॥
सत्यात् नास्ति परो धर्मो, नानृतात् पातकं परम् ।
न च वेदात् परं शास्त्रं, नास्ति मातृ-समो गुरुः ॥३॥
सर्वं पर-वशं दुःखं, सर्वमात्म-वशं सुखम् ।
एतद् विद्यात् समासेन लक्षणं सुख दुःखयोः ॥४॥
एकेनापि सु-वृक्षेण पुष्पितेन सु-गन्धिना ।
वनं सु-वासितं सर्वं, सु-पुत्रेण कुलं यथा ॥५॥
यत्र विद्वज्जनो नास्ति, श्लाघ्यस्तत्राल्प-धीरपि ।
निरस्त - पादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते ॥६॥
यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः ।
शोचन्ति जामयो यत्र, विनश्यत्याशु तत्कुलम् ॥७॥
नालसाः प्राप्नुवन्त्यर्थं, न क्लीबा न च मानिनः ।
न च लोक-रवाद् भीता, न च शश्वत्-प्रतीक्षिणः ॥८॥
श्रेयान् स्व-धर्मो विगुणः पर-धर्मात् स्वनुष्ठितात् ।
स्व-धर्मे निधनं श्रेयः, पर-धर्मो भयावहः ॥९॥
उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बंधुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥१०॥

आपदां कथितः पन्था इन्द्रियाणामसंयमः ।
तज्जयः संपदां मार्गो, येनेष्टं तेन गम्यताम् ॥११॥
न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।
हविषा कृष्ण-वर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते ॥१२॥
अतिथिर् यस्य भग्नाशो गृहात् प्रतिनिवर्तते ।
स तस्मै दुष्कृतं दत्त्वा पुण्यमादाय गच्छति ॥१३॥
मनस्वी म्रियते कामं, कार्पण्यं न तु गच्छति ।
अपि निर्वाणमायाति, नानलो याति शीतताम् ॥१४॥
कुसुम-स्तबकस्येव द्वे वृत्ती तु मनस्विनः ।
मूर्ध्नि वा सर्व-लोकस्य, विशीर्येत वनेऽथवा ॥१५॥
सूतो वा सूत-पुत्रो वा, यो वा को वा भवाम्यहम् ।
दैवायत्तं कुले जन्म, मदायत्तं तु पौरुषम् ॥१६॥
एकेनापि सु-पुत्रेण सिंही स्वपिति निर्भयम् ।
सहैव दशभिर् पुत्रैर् भारं वहति रासभी ॥१७॥
उदेति सविता ताम्रस्, ताम्र एवास्तमेति च ।
संपत्तौ च विपत्तौ च महतामेक-रूपता ॥१८॥
वज्रादपि कठोराणि, मृदूनि कुसुमादपि ।
लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हति ॥१९॥
जननी जन्म-भूमिश्च जाह्नवी च जनार्दनः ।
जनकः पञ्चमश्चैव जकाराः पञ्च दुर्लभाः ॥२०॥

अभ्यास

(१)

(१) **शब्दार्थ लिखो—**

समाधिना, श्लाघ्य, निरस्त। द्रुमायते, आमयः, स्यात्, कृष्णवर्त्मा;

निर्वाणं; स्तबक; आयत्तं, लोकोत्तराणां ।

(२) वृक्ष और जल के जितने नाम बता सको बताओ ।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—

नायंस्तु, स्वनुष्ठितात्, आत्मनात्मानं, आत्मैव, पञ्चमश्चैव ।

(२) समास-विग्रह करो—

सुख-दुःखयोः, अल्पधीः, भग्नाशः, मदायत्तं, लोकात्तराणां ।

(३) शब्द-रूप लिखो—

आत्मन्—द्वितीया में; श्रेयस्—प्रथमा में; मातृ—षष्ठी में; मूर्धन्—द्वितीया में; प्रतीक्षिन्—तृतीया में; तत्—सप्तमी में ।

(४) धातु-रूप लिखो—

श्रु—लट् अन्यपुरुष; मृ—लिङ् अन्यपुरुष; विद्—लोट् मध्यम-पुरुष; स्वप्—लृट् उत्तमपुरुष; प्र + आप् = प्राप्—लङ् उत्तम-पुरुष; वि + ज्ञा = विज्ञा—लट् मध्यमपुरुष ।

(५) ये रूप किस धातु के हैं ? वाच्य, काल, वचन और पुरुष का निर्देश भी करो—

उदेति, एति, श्रूयताम्, गम्यताम्, शाम्यति, विशीर्यंत ।

(६) प्रश्न ५ में आयी हुई धातुओं के भूतकृदन्त लिखो ।

(३)

(१) पद्य १४ और १७ का वाच्य-परिवर्तन करो ।

(२) मनस्वि पुरुष के विषय में संस्कृत में पांच वाक्य लिखो ।

(४)

(१) धर्म का सार आपकी समझ में क्या है ?

(२) सूतो वा सूतपुत्रो वा—यह उक्ति किसकी है ? उसके पौरुष के विषय में क्या जानते हो ?

(३) आत्मैव आत्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः—इस उक्ति के भाव को बढ़ाकर लिखो।

(४) जननी और जन्मभूमि का महत्त्व बताने वाली और उक्तियाँ याद हों तो लिखो।

। १६ ।

शुकनासोपदेशः

(कादम्बरीतः)

[महाकवि बाणभट्ट एकमत से संस्कृत के सर्वश्रेष्ठ गद्य-लेखक हैं। वे कन्नौज के अधिपति सम्राट् हर्षवर्धन की राजसभा में रहते थे, जिनका शासनकाल सं. ६६३ से सं. ७०५ तक है।

बाणभट्ट की दो गद्य-रचनाएँ प्रसिद्ध हैं—१. हर्षचरित, २. कादम्बरी। हर्षचरित में सम्राट् हर्ष के चरित्र का वर्णन किया गया है। आनुषंगिक रूप में स्वयं कवि का चरित्र भी वर्णित हुआ है। कादम्बरी एक गद्य-काव्यात्मक कथा है। संस्कृत के साहित्यिक गद्य की वह सर्वोत्कृष्ट कृति है। उसके वर्णन बड़े ही सजीव और मनोरम हैं। भाषा पर कवि का अद्भुत अधिकार है।

संकलित अंश कादम्बरी से लिया गया है। राजकुमार चन्द्रापीड विद्या प्राप्त कर गुरुकुल से लौटा है और अब उसका यौवराज्याभिषेक होने जा रहा है। इस अवसर पर उसके पिता का मंत्री शुकनास उसे उपदेश देता है। यह उपदेश कादम्बरी के सर्वश्रेष्ठ अंशों में से है। इसमें उपदेश-कर्ता के मानव-प्रकृति के ज्ञान का अच्छा परिचय मिलता है। इसके लक्ष्मीनिन्दा प्रकरण को यहाँ उद्धृत किया गया है।]

आलोकयतु तावत् कल्याणाभिनिवेशी लक्ष्मीमेव प्रथमम्।

इयं हि लक्ष्मीर् लब्धापि खलु दुःखेन परिपाल्यते। दृढ़-गुण-संदान-निष्पन्दीकृतापि नश्यति। पञ्जर-विधृताप्यपक्रामति। परिपालितापि प्रपलायते। न परिचयं रक्षति। नाभिजनमीक्षते। न रूपमालोकयते। न शीलं पश्यति। न वैदग्ध्यं गणयति। न धर्म-मनुरुध्यते। न त्यागमाद्रियते। न विशेषज्ञतां विचारयति। नाचारं

पालयति । न सत्यमनुबुध्यते । गन्धर्व-नगर-लेखेव पश्यत एव नश्यति । अति प्रयत्नविधृतापि परिस्खलति ।

जनं गुणवन्तं अपवित्रमिव न स्पृशति । उदारसत्त्वम् अमंगलमिव न बहु मन्यते । सुजनम् अनिमित्तमिव न पश्यति । अभिजातम् अहिमव लङ्घयति । शूरं कण्टकमिव परिहरति । दातारं दुःस्वप्नमिव न स्मरति । विनीतं पातकिनमिव नोपसर्पति । मनस्विनम् उन्मत्तमिवोपहसति ।

न हि एवंविधम् अपरिचितम् इह जगति किञ्चिदस्ति यथा इयमनार्या । न हि तं पश्यामि योऽपरिचितयानया न निर्भरमुपगूढः यो वा न विप्रलब्धः । अनया दुराचारया कथमपि दैव-वशेन परिगृहीता विक्लवा भवन्ति राजानः, सर्वाविनयाधिष्ठानतां च गच्छन्ति । दर्शन-प्रदानमपि अनुग्रहं गणयन्ति । दृष्टि-पातमपि उपकार-पक्षे स्थापयन्ति । संभाषणमपि संविभाग-मध्ये कुर्वन्ति । आज्ञामपि वर-प्रदानं मन्यन्ते । स्पर्शमपि पावनमाकलयन्ति ।

मिथ्या-माहात्म्य-गर्व-निर्भराश् च न प्रणमन्ति देवताभ्यः । न पूजयन्ति द्विजातीन् । न मानयन्ति मान्यान् । नार्चयन्ति अर्चनीयान् । नाभिवादयन्ति अभिवादनार्हान् । नाऽभ्युत्तिष्ठन्ति गुरून् । उपहसन्ति विद्वज्जनम् । जरा-वैक्लव्य-प्रलपितमिति पश्यन्ति वृद्धोपदेशम् । आत्म-प्रज्ञा-परिभव इत्यसूयन्ति सचिवोपदेशाय । कुप्यन्ति हितवादिने ।

सर्वथा तमभिनन्दन्ति, तमालपन्ति, तं पार्श्वं कुर्वन्ति, तं संवर्धयन्ति, तस्मै ददति, तस्य वचनं श्रृण्वन्ति, तं बहु मन्यन्ते, तं आप्ततामापादयन्ति, योऽहर्निशम् उपरचिताञ्जलिर् अधिदैवतमिव विगतान्य-कर्तव्यः स्तौति यो वा माहात्म्यमुद्भावयति ।

अभ्यास

(१)

(१) शब्दों के अर्थ लिखो—

कल्याणाभिनिवेशी, गुण-संदान, अभिजन, दुःस्वप्न, उपसर्पत्ति, अनार्या, उपगूढ़, विप्रलब्ध, परिगृहीताः, विक्लवाः, संविभाग, निर्भर, वैक्लव्य, असूयन्ति, अधिदैवतम् ।

(२) नहीं ठहरती—इस भाव को संस्कृत में जितने प्रकार से प्रकट कर सको, प्रकट करो ।

(३) अनुरुध्यते और अनुबुध्यते में अन्तर बताओ ।

(२)

(१) समास विग्रह करो—

दृढ़-गुण-संदान-निष्पन्दीकृता, पञ्जर-विधृता, उदारसत्त्वम्, अमङ्गलम्, अनार्या, दुराचारा, अविनयाधिष्ठानतां, मिथ्या-माहात्म्य-गर्व-निर्भराः, विगतान्य-कर्तव्यः ।

(२) प्रकृति और प्रत्यय बताओ—

लब्धा, अपरिचित, उपगूढ़, अधिष्ठान, प्रदान, पात, मान्य, पातकिन्, माहात्म्य, वैक्लव्य ।

(३) रूप लिखो—

नश्—लट् उत्तमपुरुष; आ + दृ—लट् अन्यपुरुष; दृश्—लोट् मध्यमपुरुष; मन्—लङ् अन्यपुरुष; उत् + स्था = उत्था—लट् मध्यमपुरुष; दा—लट् अन्यपुरुष ।

(३)

(१) लक्ष्मी के दोषों का वर्णन अपने शब्दों में करो ।

(२) वाच्य परिवर्तन करो—

न परिचयं रक्षति·····न सत्यमनुबुध्यते ।

जनं गुणवन्तं····उन्मत्तमिवोपहसति ।

(४)

(१) इस गद्यांश की भाषा-शैली की विशेषताएं बताओ।

(२) धन के अभिमान में फूले हुए पुरुषों के चरित्र का वर्णन करो।

(३) शुकनास के उपदेश को कादम्बरी के हिन्दी-अनुवाद मे पूरा पढ़ो।

(४) गंधर्व-नगर किसे कहते हैं ?

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. कादम्बरी—संस्कृत, भानुचन्द्र की टीका (निर्णयसागर प्रेस, बम्बई)।

२. कादम्बरी—अंग्रेजी अनुवाद और टिप्पणियों सहित, संपादक—नेरूरकर और देवस्थली (कर्नाटक पब्लिशिंग हाउस, बम्बई)।

३ कादम्बरी—संस्कृत-हिन्दी टीका (चौखम्भा संस्कृत सीरीज, वाराणसी

४. कादम्बरी—हिन्दी अनुवाद, ऋषीश्वरनाथ भट्ट कृत (भारती भण्डार इलाहाबाद)।

५. कादम्बरी-कथासार—गदाधरसिंह कृत (इण्डियन प्रेस)।

६. कादम्बरी— राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली)।

७. कादम्बरी, एक अध्ययन—हिन्दी अनुवाद सहित, वासुदेवशरण अग्रवाल (चौखम्भा)।

८. कादम्बरी—अंग्रेजी अनुवाद (Jaico Books)।

९. कादम्बरी-कथासारः—वि. म. आप्टे (श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा)।

१०. शुकनासोपदेशः—के. राम सक्सेना संपादित।

११. हर्षचरित, एक अध्ययन—वासुदेवशरण अग्रवाल।

: १७ :

कर्णस्यौदार्यम्

(कर्णभारात्)

[महाकवि भास संस्कृत के बहुत प्राचीन नाटककार हैं। कालिदास के समय तक वे पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुके थे। कालिदास ने उनका नाम बड़े आदर के साथ लिया है। बाण ने और राजशेखर ने भी भास की नाट्यकला की विशद् प्रशंसा की है। सूक्ति-संग्रहों में भास के पद्य उद्धृत हुए हैं।

कराल-काल-वंश भास के नाटक लुप्त हो गये। सं १९६९ वि. में त्रिवेन्द्रम के महामहोपाध्याय गणपति शास्त्री ने तेरह नाटकों को ढूंढ़ निकाला। इन सब नाटकों की लेखन-शैली परस्पर बहुत मिलती है जिससे वे एक ही लेखक की रचना जान पड़ते हैं। इनमें से एक नाटक का नाम स्वप्न-नाटक है और उसमें वासवदत्ता की कथा है। शास्त्रीजी ने इसे भास का स्वप्नवासवदत्त नाटक मानकर बाकी को भास की रचनाएँ माना है। गणपति शास्त्री के इस मत को कई विद्वानों ने साधार माना और दूसरों ने निराधार।

इन तेरह नाटकों में प्रतिमा और अभिषेक ये दो रामायण की कथा को लेकर; पञ्चरात्र, मध्यम-व्यायोग, कर्णभार, दूत-वाक्य, दूत-घटोत्कच और ऊरुभंग ये छह महाभारत की कथा को लेकर; बालचरित कृष्ण-चरित्र को लेकर तथा दरिद्र-चारुदत्त, अविमारक, प्रतिज्ञा-यौगंधरायण और स्वप्न-नाटक ये चार लोक-कथाओं को लेकर लिखे गये हैं। रामायण की कथा पर लिखा हुआ उनका एक और नाटक यज्ञफल बताया गया है।

नाट्य-कला की कसौटी पर ये नाटक पूरी तरह खरे उतरते हैं। भाषा सर्वत्र अत्यन्त सरल, सुबोध और प्रवाहमयी है। वाक्य छोटे-छोटे हैं।

संकलित अंश कर्णभार से लिया गया है। इसमें कर्ण की उदारता की एक मनोरम झांकी है।]

कर्णः—शल्यराज ! यावद् रथमारोहावः।

शल्यः—बाढम्।

(उभौ रथारोहणं नाटयतः)

कर्णः—शल्यराज ! यत्रासावर्जुनस् तत्रैव नोद्यतां मम रथः।

(नेपथ्ये)

भोः कर्ण ! महत्तरां भिक्षां याचे।

कर्णः—(आकर्ण्य) अये ! वीर्यवान् शब्दः। आहूयतां स विप्रः। न न। अहमेवाह्वयामि। भगवन् ! इत इतः।

(ततः प्रविशति ब्राह्मण-रूपेण-शक्रः)

शक्रः—(कर्णमुपगम्य) भोः कर्ण ! महत्तरां भिक्षां याचे।

कर्णः—दृढं प्रीतोऽस्मि भगवन् ! नमस्करोमि।

शक्रः—(आत्मगतम्) किं नु खलु मया वक्तव्यं ? यदि दीर्घायुर्भवेति वक्ष्ये दीर्घायुर्भविष्यति। यदि न वक्ष्ये मूढ इति मां परिभवति। तस्मादुभयं परिहृत्य किं न खलु वक्ष्यामि ? भवतु, दृष्टम् (प्रकाशम्) भोः कर्ण ! सूर्य इव, चन्द्र इव, हिमवान् इव, सागर इव तिष्ठतु ते यशः।

कर्णः—भगवन् ! किं न वक्तव्यं दीर्घायुर्भवेति ? अथवा एतदेव शोभनम्। कुतः—

धर्मो हि यत्नैः पुरुषेण साध्यो
भुजंग-जिह्वा-चपला नृप-श्रियः।
तस्मात् प्रजा-पालन-मात्र-बुद्ध्या
हतेषु देहेषु गुणा धरन्ते ॥१॥

भगवन् ! किमिच्छसि ? कमहं ददामि ?

शक्रः—महत्तरां भिक्षां याचे ।

कर्णः—महत्तरां भिक्षां भवते प्रदास्य । श्रूयन्तां, मद्विभवाः ।

गुणवदमृतकल्प-क्षीरधाराभिवर्षि
द्विजवर ! रुचितं ते तृप्त-वत्सानुयात्रम् ।
तरुणमधिकमर्थि-प्रार्थनीयं पवित्रं
विहित-कनक-श्रृङ्गं गो-सहस्रं ददामि ॥२॥

शक्रः—गो-सहस्रमिति ? मुहूर्तकं क्षीरं पिबामि । नेच्छामि कर्ण ! नेच्छामि ।

कर्णः—किं नेच्छति भवान् ! इदमपि श्रूयताम्—

रवि-तुरग-समानं साधनं राज-लक्ष्म्याः
सकल-नृपति-मान्यं मान्य काम्बोज-जातम् ।
सु-गुणमनिल-वेगं युद्ध-दृष्टापदानं
सपदि बहु सहस्रं वाजिनां ते ददामि ॥३॥

शक्रः—अश्व इति ! मुहूर्तकमारोहामि । नेच्छामि कर्ण ! नेच्छामि ।

कर्णः—किं नेच्छति भवान् ? अन्यदपि श्रूयताम्—

मद-सरित-कपोलं षट्पदैः सेव्यमानं
गिरि-वर-निचयाभं मेघ-गम्भीर-घोषम् ।
सित-नख-दशनानां वारणानामनेकं
रिपु-समर-विमर्दं वृन्तमेतद् ददामि ॥४॥

शक्रः—गज इति ? मुहूर्तकमारोहामि । नेच्छामि कर्ण ! नच्छामि ।

कर्णः—किं नेच्छति भवान् ? अन्यदपि श्रूयताम । अपर्याप्तं कनकं ददामि ।

शक्रः—गृहीत्वा गच्छामि। (किंचिद गत्वा) नेच्छामि कर्ण। नेच्छामि।

कर्णः—तेन हि जित्वा पृथिवीं ददामि।

शक्रः—पृथिव्याः किं करिष्यामि ?

कर्णः—तेन ह्यग्निष्टोम-फलं ददामि।

शक्रः—अग्निष्टोम-फलेन किं कार्यम् ?

कर्णः—तेन हि मच्छिरो ददामि।

शक्रः—अविधा ! अविधा !

कर्णः—न भेतव्यं ! न भेतव्यं ! प्रसीदतु भवान्। अन्यदपि श्रूयताम्—

अंगैः सहैव जनितं मम देह-रक्षं
देवासुरैरपि न भेद्यमिदं सहास्त्रैः।
देयं तथापि कवचं सह कुण्डलाभ्यां
प्रीत्या मया भगवते रुचितं यदि स्यात् ॥५॥

शक्रः—(सहर्षम्) ददातु ! ददातु !

कर्णः—(आत्मगतम्) एष एवास्य कामः। किं नु खल्वनेक-कपट-बुद्धेः कृष्णस्योपायः। सोऽपि भवतु। धिगयुक्तमनुशोचितुम्। नास्ति संशयः (प्रकाशम्) गृह्यताम्।

शल्यः—अंगराज ! न दातव्यम् ! न दातव्यम्।

कर्णः—शल्यराज ! अलमलं वारयितुम्। पश्य—

शिला क्षयं गच्छति काल-पर्ययात्
सु-बद्ध-मूला निपतन्ति पादपाः।
जलं जल-स्थान-गतं च शुष्यति
हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति ॥६॥

तस्माद् गृह्यताम् । (निकृत्य ददाति)

शक्रः—(गृहीत्वा आत्मगतम्) हन्त ! गृहीते एते ।

(निष्क्रान्तः)

शल्यः—भो अङ्गराज ! वञ्चितः खलु भवान् ।

कर्णः—केन ?

शल्यः—शक्रेण ।

कर्णः—न खलु, शक्रः खलु मया वञ्चितः । कुतः—

अनेक-यज्ञाहुति-तर्पितो द्विजैः
किरीटवान् दानव-संघ-मर्दनः ।
सुर-द्विपास्फालन कर्कशाङ्गुलिर्
मया कृतार्थः खल पाकशासनः ॥७॥

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ लिखो—

वीर्यवान्, धरन्ते, अनुयात्रम्, काम्बोज, अनिल, दृष्टापदानं, सपदि, विमर्द अपर्याप्त, अग्निष्टोम, अविधा, देहरक्षः पर्यय, निकृत्य, आस्फालन, कृतार्थः, पाकशासन ।

(२) इन्द्र के पर्याय-शब्द लिखो ।

(२)

(१) समास-विग्रह करो—

दीर्घायुः, भुजंग-जिह्वा-चपलाः, नृपश्रियः, तृप्तवत्सानुयात्रं गोसहस्रं, नृपतिः, सुगुणं, अनिलवेगं; षट्पदैः, मेघ-गम्भीर-घोष ।

(२) प्रकृति और प्रत्यय बताओ—

महत्तराः, परिहृत्य, साध्यः, अनुशोचितुम्, वञ्चितः, तर्पितः ।

(३) निम्नलिखित रूपों में धातु, वाच्य, काल, पुरुष और वचन बताओ—
आहूयताम्, श्रूयताम्, प्रदास्ये, याचे, वक्ष्यामि ।

(४) आत्मनेपदी धातुओं से वर्तमान-कृदन्त कैसे बनाया जाता है। पाँच उदाहरण भी लिखो ।

(३)

(१) पद्य ६ का वाच्य-परिवर्तन करो ।
(२) कर्ण के किये हुए कार्यों के वर्णन को अपने शब्दों में लिखो।

(४)

(१) कर्ण के चरित्र का वर्णन करो ।
(२) ब्राह्मण कौन था? उसने कर्ण का कवच क्यों माँग लिया।
(३) ब्राह्मण ने कर्ण को दीर्घायु का आशीर्वाद क्यों नहीं दिया?
(४) इस दृश्य का अभिनय करो ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. भास-नाटक-चक्रम् (पूना ओरियंटल बुक एजेंसी) ।
२. बलदेव उपाध्याय : भास ।
३. A. P. S. Ayyar : Bhasa
४. Woolner : Thirteen Trivandrum Plays, English Translation, vol. II.
५ कर्णभार—हिंदी-अनुवाद सहित (चोखम्भा, वाराणसी) ।

: १८ :

सुभाषितानि (३)

(१)

विद्या विवादाय धनं मदाय
शक्तिः परषां परिपीडनाय ।
खलस्य साधोर् विपरीतमेतज्
ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय ॥

(२)

आरम्भ-गुर्वी क्षयिणी क्रमेण
लघ्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात् ।
दिनस्य पूर्वार्धं-परार्धं-भिन्ना
छायेव मैत्री खल-सज्जनानाम् ॥

(३)

पिवन्ति नद्यः स्वयमव नाम्भः
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः ।
नादन्ति सस्यं खलु वारिवाहाः
परोपकाराय सतां विभूतयः ॥

(४)

भवन्ति नम्रास् तरवः फलोद्गमेर्
नवाम्बुभिर् भूरि-विलम्बिनो घनाः ।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम ॥

(५)

तृणानि नोन्मूलयति प्रभञ्जनो
मृदूनि नीचैः प्रणतानि सर्वतः ।
समुच्छ्रितानेव तरून् प्रबाधते
महान् महत्स्वेव करोति विक्रमम् ॥

(६)

कदर्थितस्याऽपि हि धर्य-वृत्तेर्
न शक्यते धय-गुणः प्रमार्ष्टुम् ।
अधो-मुखस्याऽपि कृतस्य वह्नेर्
नाधः शिखा याति कदाचिदेव ॥

(७)

रत्नैमहार्हैस् तुतुषुर्न देवा
न भेजिरे भीम-विषेण भीतिम् ।
सुधां विना न प्रययु र्विरामं
न निश्चितार्थाद् विरमन्ति धीराः ॥

(८)

न स्वल्पमप्यध्यवसाय - भीरोः
करोति विज्ञान-विधिर् गुणं हि ।
अन्धस्य किं हस्त-तल-स्थितोऽपि
प्रकाशयत्यर्थमिह प्रदीपः ॥

(९)

उत्साह - संपन्नमदीर्घ - सूत्रं
क्रिया - विधिज्ञ व्यसनेष्वसक्तम् ।

शूरं कृतज्ञं दृढ़ - सौहृदं च
लक्ष्मीः स्वयं याति निवास-हेतोः ॥

(१०)

कु - चैलिनं दन्त - मलोपधारिणं
बह्वाशिनं निष्ठुर - भाषिणं च ।
सूर्योदये चास्तमिते शयानं
विमुञ्चति श्रीर् यदि चक्रपाणि ॥

(११)

सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते
घनान्धकारेष्विव दीप - दर्शनम् ।
सुखात् तु यो याति नरो दरिद्रतां
धृतः शरीरेण मृतः स जीवति ॥

(१२)

स्वयं महेशः श्वशुरो नगेशः
सखा धनेशस् तनयो गणेशः ।
तथापि भिक्षाटनमेव शम्भोर्
बलीयसी केवलमीश्वरेच्छा ॥

(१३)

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः
स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः ।
स एव वक्ता स च दर्शनीयाः
सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ॥

(१४)

किं वाससैवं न विचारणीयं
वासः प्रधानं खलु योग्यतायाः ।
पीताम्बरं वीक्ष्य ददौ तनूजां
दिगम्बरं वीक्ष्य विषं समुद्रः ॥

(१५)

पुराणमित्येव न साधु सर्वं
न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम् ।
सन्तः परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते
मूढः पर - प्रत्यय - नेय-बुद्धिः ॥

(१६)

असंभवं हेम - मृगस्य जन्म
तथापि रामो लुलुभे मृगाय ।
प्रायः समासन्न - विपत्ति - काले
धियोऽपि पुंसां मलिनीभवन्ति ॥

(१७)

क्षते प्रहारा निपतन्त्यभीक्ष्णं
धन - क्षये वर्धति जाठराग्निः ।
आपत्सु वैराणि समुद्भवन्ति
छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति ॥

(१८)

त्यजत् क्षुधार्तो महिला सपुत्रां
खादेत् क्षुधार्ता भुजंगी स्वमण्डम ।

बुभुक्षितः किं न करोति पापं
क्षीणा नरा निष्करुणा भवन्ति ॥

(१९)

खादन्न गच्छामि, हसन्न जल्प,
गतं न शोचामि, कृतं न मन्ये ।
द्वयोस् तृतीयो न भवामि राजन् !
केनाऽस्मि मूर्खो वद कारणेन ? ॥

(२०)

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा
वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम् ।
धर्मो न व यत्र च नास्ति सत्यं
सत्यं न तद् यद् छलनानुविद्धम् ॥

(२१)

अर्थातुराणां न गुरुर्न बन्धुः
कामातुराणां न भयं न लज्जा ।
चिन्तातुराणां न सुखं न निद्रा
क्षुधातुराणां न बलं न तेजः ॥

(२२)

अर्थागमो नित्यमरोगिता च
प्रिया च भार्या प्रिय-वादिनी च ।
वश्यश्च पुत्रोऽर्थ-करी च विद्या
षड् जीव-लोकस्य सुखानि, राजन् ! ।

(२३)

श्रुतिर्विभिन्ना, स्मृतयो विभिन्ना
नैको मुनिर्, यस्य वचः प्रमाणम् ।
धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां
महाजनो येन गतः स पन्थाः ॥

(२४)

ऋतुर्व्यतीतः परिवर्तते पुनः
क्षयं प्रयातः पुनरेति चन्द्रमाः ।
गतं गतं नैव तु संनिवर्तते
जलं नदीनां च नृणां च यौवनम् ॥

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ लिखो—

वदन्ति, समुच्छ्रित, धैर्यवृत्तेः, भेजिरे, अदीर्घसूत्रं, अवद्यं, छलना ।

(२) स्त्रीलिंग के रूप लिखो—

गुरुः, लघुः, बलीयान्, तृतीयः, शयानं, प्रियवादिन् ।

(३) विपरीत शब्द लिखो—

क्षय, दुःख, दरिद्र, पुराण, मूढ, आसन्न ।

(४) 'खाना' अर्थ की जितनी धातुएँ बता सको, बताओ ।

(२)

(१) संधि करो—

एतत् + ज्ञानाय, महत्सु + एव, दुःखानि + अनुभय, वाससा + एवं, इति + अवद्यः, धियः + अपि, प्रहाराः + निपतन्ति, रामः + गच्छति, हरिः + गच्छति, हरिः + तरति, रामः + आयातः ।

(२) समास-विग्रह करो

खल-सज्जनानाम्, नवाम्बुभिः, क्रिया-विधि-ज्ञं, भिसोटनं, क्षुधार्तः, छलनानुविद्धं, समासन्न-विपत्ति-काले।

(३) भाववाचक कृदन्त बनाने में कौन-कौन-से प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं। भाववाचक कृदन्तों के पांच उदाहरण लिखो।

(४) प्रकृति प्रत्यय बताओ—

विवादः, परिपीडनाय, वृद्धिमती, भिन्ना, वारिवाहाः, विलम्बिनः, अनुद्धताः, प्रभञ्जनः, प्रमार्ष्टुम्, विरामः, अध्यवसायः, परीक्ष्य, नेयः, बुद्धिः, जाठरः, निहितः, अनुभूय, क्षय।

(५) निम्नलिखित धातुओं को प्रेरणात्मक बनाओ और प्रत्येक के लट् उत्तमपुरुष के रूप लिखो—

कृ, तुष्, दा, लुभ्, पत्, वृध्।

(३)

(१) श्लोक २ के भाव को अपने शब्दों में लिखो।

(२) अव्ययीभाव समास के पांच उदाहरण लिखो और उनका प्रयोग वाक्यों में करो।

(४)

(१) इस पाठ के पद्यों में कई सुन्दर उपमाएँ आयी हैं। उनको चुनकर बताओ।

(२) पद्य २३ के भाव को स्पष्ट करो।

(३) ऐसी कहावतें या पद्य लिखो जिनके भाव इस पाठ के पद्यों से या उनकी किन्हीं पंक्तियों से मिलते-जुलते हों।

: १६ :

भविष्णुबलिः

(अभिज्ञान-शाकुन्तलात्)

[कालिदास सर्व-सम्मति से संस्कृत के सर्वश्रेष्ठ महाकवि माने गये हैं। अनुश्रुति के अनुसार वे उज्जयिनी के सम्राट् संवत्-प्रवर्तक महाराज विक्रमादित्य के समकालीन थे। कई-एक आधुनिक विद्वानों के मतानुसार वे गुप्तकाल में हुए।

कालिदास के सम्बन्ध में अनेक कथाएँ प्रसिद्ध हैं। एक कथा के अनुसार पहले वे घोर मूर्ख थे। पंडितों ने उनका विवाह छल से एक राजकुमारी के साथ करवा दिया। राजकुमारी की फटकार से लज्जित होकर उन्होंने काली की उपासना की और उसके वरदान से विद्वत्ता तथा कवि-प्रतिभा प्राप्त की।

कालिदास के नाम से अनेक कृतियाँ प्रसिद्ध हैं पर निम्नलिखित सात रचनाएँ ही प्रामाणिक मानी जाती हैं—

१. अभिज्ञानशाकुन्तलम् या शकुन्तला, २. विक्रमोर्वशीयम्, ३. मालविकाग्निमित्रम्, ४. रघुवंशम्, ५. कुमारसंभवम्, ६. मेघदूत, ७. ऋतुसंहार। इनमें प्रथम तीन नाटक और अंतिम चार काव्य हैं।

अभिज्ञानशाकुन्तलम्, संस्कृत-साहित्य का सर्वश्रेष्ठ नाटक है। इसकी कथा महाभारत से ली गयी है। इसमें महर्षि कण्व की पालिता कन्या शकुन्तला और चंद्रवंशी राजा दुष्यन्त के प्रेम की, दुष्यन्त द्वारा शकुन्तला के परित्याग की, तथा अन्त में दम्पति के पुनर्मिलन की कथा सात अंकों में कही गयी है। इस नाटक ने देशी और विदेशी विद्वानों को समान रूप से मुग्ध किया है। इसमें मानव-हृदय के विविध कोमल भावों के बड़े ही मर्मस्पर्शी और सजीव चित्र अंकित हुए हैं।

संकलित अंश नाटक के सातवें अक से लिया गया है। उसमें शकुन्तला के पुत्र होनहार बालक भरत के पराक्रमपूर्ण बाल्य-जीवन की सु-मधुर झांकी हैं।]

(नेपथ्ये) मा खलु चापलं कुरु। कथं गत एव आत्मनः प्रकृतिम्।

राजा—(कर्णंदत्वा) अभूमिरियम् अविनयस्य। को नु खल्वेष निषिध्यते? (शब्दानुसारेणावलोक्य सविस्मयम्) अये को नुखल्वयम् अनुबध्यमानस् तपस्विनीभ्याम् अबाल-सत्त्वो बालः?

अर्ध-पीत-स्तनं मातुरामर्द-क्लिष्ट-केसरम्।
प्रक्रीडितुं सिंह-शिशुं बलात्कारेण कर्षति ॥१॥

बालः—जृम्भस्व सिंह? दन्तास्ते गणयिष्यामि।

प्रथमा—अविनीत! किं नोऽपत्य-निर्विशषाणि सत्त्वानि विप्रकरोषि? हन्त! वर्धते ते संरम्भः। स्थाने खलु ऋषि-जनेन सर्वदमन इति कृत-नामधेयोऽसि।

राजा—किं नु खलु बालेऽस्मिन् औरस इव पुत्रे स्निह्यति मे मनः। नूनमनपत्यता मां वत्सलयति।

द्वितीया—एषा खलु केसरिणी त्वां लङ्घते यदि अस्याः पुत्रकं न मुञ्चसि।

बालः—(सस्मितम्)—अम्मह! बलीयः खलु भीतोऽस्मि। (अधरं दर्शयति)

प्रथमा—वत्स! एतं बाल-मृगेन्द्रं मुञ्चापरं ते क्रीडनकं दास्यामि।

बालः—कुत्र? देहि तत (हस्तं प्रसारयति)

राजा—कथं चक्रवर्ति लक्षणमप्यनन धार्यं।

द्वितीया—सुव्रते ? न शक्य एव वाङ्मात्रेण विस्मयितुम्। वच्छ त्वम्, मदीयं उटजे मार्कण्डेयस्य ऋषि-कुमारस्य वर्णचित्रितो मृत्तिका-मयूरस् तिष्ठति, तमस्य उपहृत्य।

प्रथमा—तथा। (निष्क्रान्ता)

बालः—अनेनैव तावत् क्रीडिष्यामि।

राजा—स्पृहयामि खलु दुर्ललितायास्मै।

तापसी—भवतु, न मामयं गणयति। कोऽत्र ऋषि-कुमाराणाम्—(राजानमवलोक्य) भद्रमुख! एहि तावन् मोचयानेन दुर्मोच-हस्त-ग्रहेण डिम्भ-लीलया बाध्यमानं बाल-मृगेन्द्रम्।

राजा—(उपगम्य सस्मितम्) अयि भो महर्षि पुत्र!

तापसी—भद्र मुख! न अयम् ऋषि-कुमारः।

राजा—आकार-सदृशं चेष्टितमेवास्य कथयति। स्थान प्रत्ययात् तु वयमेवं-तर्किणः। (यथाभ्यर्थितमनुतिष्ठन् बालसुखम्-पलभ्यात्मगतम्)

अनेन कस्यापि कुलाङ्कुरेण
स्पृष्टस्य गात्रेषु सुखं ममैवम्
कां निर्वृतिं चेतसि तस्य कुर्याद्
यस्यायमङ्कात् कृतिनः प्ररूढः ॥२॥

तापसी—(उभौ निर्वर्ण्य) आश्चर्यमाश्चर्यम्!

राजा—आर्ये! किमिव?

तापसी—अस्य बालकस्य रूप-संवादिनी ते आकृतिरिति विस्मितास्मि। अपि च अपरिचितस्यापि ते अप्रतिलोमः संवृत्त इति।

राजा—(बालकमुपलालयन्) न चेन्मुनि-कुमारोऽयम् अथ कोऽस्य व्यपदेशः ?

तापसी—पौरव इति।

राजा—(आत्म-गतम्) कथमेकान्वयो मम ? अतः खलु मदनुकारिणमेनमत्रभवती मन्यते। (प्रकाशम्) न पुनरात्मगत्या मानुषाणामेष विषयः।

तापसी—यथा भद्रमुखो भणति। अप्सरः-संबन्धेन पुनरस्य जननी अत्र देव-गुरोस् तपोवने प्रसूता।

राजा—(अपवार्य) हन्त द्वितीयमिदमाशा-जननम् ! अथ सा तत्रभवती किमाख्यस्य राजषः पत्नी ?

तापसी—कस् तस्य धर्म-दार-परित्यागिनो नाम संकीर्तयितुं चिन्तयिष्यति ?

राजा—(स्व-गतम्) इयं खलु कथा मामेव लक्ष्यीकरोति। यदि तावदस्य शिशोर् मातरं नामतः पृच्छामि ! अथवा अनार्यः पर-दार-व्यवहारः।

(प्रविश्य मृन्मयूर-हस्ता तापसी)

तापसी—सर्वदमन ! शकुन्त-लावण्यं प्रेक्षस्व।

बालः—(स-दृष्टि-क्षेपम्) कुत्र सा मे अम्बा ?

उभे—नाम-सादृश्येन वञ्चितो मातृ-वत्सलः।

द्वितीया—वत्स ! अस्य मृत्तिका-मयूरस्य रम्यत्वं पश्य इति भणितोऽसि !

राजा—(आत्म-गतम्) किं वा शकुन्तलेत्यस्य मातुराख्या ? सन्ति पुनर्नामधेय-सादृश्यानि।

बालः—अम्तिके ! रोचते मे एष भद्र-मयूरः ।

प्रथमा—अम्महे ! रक्षा-करण्डकमस्य मणि-बन्धे न दृश्यते ।

राजा—अलमलमावेगेन । ननु इदमस्य सिंह-शाव-विमर्दात् परिभ्रष्टम् ।

उभे—मा खलु ! मा खलु ! एतदवलम्ब्य……। कथं गृहीतमनेन ! (विस्मयादुरो-निहित-हस्ते परस्परावलोकयतः)

राजा—किमर्थं प्रतिषिद्धाः स्म ?

प्रथम—शृणोतु महाराज ! एषापराजिता नामौषधिरस्य जात-कर्म-समये भगवता मारीचेन दत्ता । एतां किल माता-पितरौ आत्मानं च वर्जयित्वापरो भूमि-पतितां न गृह्णाति ।

राजा—अथ गृह्णाति ?

प्रथमा—ततस्तं सर्पो भूत्वा दशति ।

राजा—भवतीभ्यां कदाचिदस्याः प्रत्यक्षीकृता विक्रिया ?

उभे—अनेकशः ।

राजा—(सहर्षमात्म-गतम्) कथमिव संपूर्णमपि मे मनोरथं नाभिनन्दामि ! (बालं परिष्वजते)

द्वितीया—सुव्रते । एहि, इमं वृत्तान्तं नियम-व्यापृतायं शकुन्तलायै निवेदयावः । (निष्क्रामतः)

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ लिखो—

अनुबध्यमान, शाव, आमर्द, क्लिष्ट, संरम्भ, भद्रमुख, क्लिष्ट चेष्टितैः, संवादिनी, व्यपदेश, अन्वय, करण्डक, मणिबन्ध ।

(२) पुत्र और सिंह के जितने पर्याय-शब्द लिख सको, लिखो ।

(२)

(१) यण् और अयादि सन्धियों में क्या अन्तर है ?

(२) नीचे लिख समासों का विग्रह करो और समास का नाम बताओ—

(क) अबालसत्त्वः, आमर्द-क्लिष्ट-केसरम्, एकान्वयः, अनार्यः ।

(ख) अ-ज्ञानम्, अज्ञानः, सहर्षम्, सहर्षः, पीताम्बरम्, पीताम्बरः, कृतकार्यम्, कृतकार्यः, रक्तपीतम्, रक्तपीतौ ।

(३) नीचे लिखे शब्दों में धातु (या शब्द), उपसर्ग और प्रत्यय अलग-अलग करके बताओ—

अनपत्यता, केसरिणी, तर्किणः, विरमयितुं, संवादिनी, अपरिचित पौरव, प्रसूत, प्रस्ताव, आवेग, परिमृष्ट ।

(४) कर्तृवाचक कृदन्त बनाने के लिए कौन-कौन से प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं ? प्रत्येक के तीन-तीन उदाहरण लिखो ।

(३)

(१) दस करोड़ पन्द्रह लाख पचपन हजार चार सौ चौरासी—इस संख्या को संस्कृत में लिखो ।

(२) संवत् उन्नीस सौ अठहत्तर में असहयोग आन्दोलन का आरम्भ हुआ—इस वाक्य का संस्कृत में अनुवाद करो ।

(४)

(१) सर्वदमन का बाल-स्वभाव जहाँ-जहाँ व्यक्त होता है, उन स्थलों का निर्देश करो ।

(२) दुष्यन्त ने कैसे क्रमशः जाना कि सर्वदमन उसका पुत्र है ?

(३) होनहार बिरवान के होत चीकने पात—यह कहावत सर्वदमन पर किस प्रकार घटती है ?

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. अभिज्ञान-शाकुन्तल—मूल और टीका ।

२. शकुन्तला नाटक—लक्ष्मणसिंह कृत हिन्दी-अनुवाद ।

३. कालिदास-ग्रंथावली—मूल और अनुवाद (विक्रम-परिषद्, वाराणसी) ।

: २० :

ऋतु-वर्णनम्

(रामायणतः)

[रामायण की रचना महर्षि वाल्मीकि ने की थी। कथा प्रसिद्ध है कि एक बार मुनि ने व्याध के बाण से बिंधे हुए क्रौंच (कुरज) पक्षी के लिए विलाप करती हुई क्रौंची का करुण शब्द सुना। सुनकर अचानक उनकी वाणी इस श्लोक के रूप में फूट पड़ी—

मा निषाद ! प्रतिष्ठां त्वमगम, शाश्वतीः समाः ।
यत् कोञ्च-मिथुनादेकमवधीः काम-मोहितम् ॥

फिर ब्रह्मा और नारद की प्रेरणा से उन्होंने इसी श्लोक छन्द में ७ कांड रामायण की रचना की। यही संस्कृत का आदि-काव्य हुआ। आदि-काव्य के कर्त्ता होने के कारण वाल्मीकि आदि-कवि कहे जाते हैं।

रामायण में भगवान् राम की कथा वर्णित है। इस ग्रन्थ में ७ कांड और कोई २४,००० श्लोक हैं।

भारतीय साहित्य के किसी ग्रन्थ ने इतनी लोकप्रियता प्राप्त नहीं की जितनी रामायण ने। जनता के जीवन को उसने बहुत प्रभावित किया है। अनेक भारतीय भाषाओं में उसके अनुवाद हुए या उसके आधार पर रामचरित्रों की रचना हुई। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण तुलसी-दास का रामचरितमानस है जिसे उत्तरी भारत की जनता का वेद कहा गया है।

रामायण की शैली स्वाभाविकता से पूर्ण और प्रसाद-गुण-मयी है। संकलित अंश में, जो किष्कन्धाकांड से लिया गया है; वर्षा और शरद् ऋतुओं का वर्णन है।]

वर्षा-वर्णनम्

(१)

रजः प्रशान्तं, स-हिमोऽद्य वायुर्
निदाघ - दोष - प्रसराः प्रशान्ताः ।
स्थिता हि यात्रा वसुधाधिपानां
प्रवासिनो यान्ति नराः स्व-देशान् ॥

(२)

घनोपगूढं गगनं, न तारा
न भास्करो दर्शनमभ्युपैति ।
नवैर्जलौघैर्धरणी वितृप्ता
तमो-विलिप्ता न दिशः प्रकाशाः ॥

(३)

वर्ष-प्रवेगा विपुलाः पतन्ति
प्रवान्ति वाताः समुदीर्ण-वेगाः ।
प्रनष्ट-कूलाः प्रवहन्ति शीघ्रं
नद्यो जलैर् विप्रतिपन्न-मार्गाः ॥

(४)

मुक्ता-समाभं सलिलं पतद् वै
सुनिर्मलं पत्र-पुटेषु लग्नम् ।
हृष्टा विवर्णच्छदना विहंगाः
सुरेन्द्र-दत्तं तृषिताः पिबन्ति ॥

(५)

वहन्ति वर्षन्ति नदन्ति भान्ति
ध्यायन्ति नृत्यन्ति समाश्वसन्ति ।
नद्यो घना मत्त-गजा वनान्ताः
प्रिया-विहीनाः शिखिनो प्लवङ्गाः ॥

शरद्-वर्णनम्

(६)

व्यक्तं नभः शस्त्र विधौत-वर्णं
कृश - प्रवाहाणि नदी - जलानि ।
कह्लार-शीताः पवनाः प्रवान्ति
तमो-विमुक्ताश् च दिशः प्रकाशाः ॥

(७)

व्यपत - पङ्कासु स - वालुकासु
प्रसन्न - तोयासु स-गो-कुलासु ।
स - सारसा राव - विनादितासु
नदीषु हृष्टा निपतन्ति हंसाः ॥

(८)

विपक्व - शालि - प्रसवानि, भक्त्वा
प्रहर्षिता सारस - चारु - पङ्क्तिः ।
नभः समाक्रामति शीघ्र - वेगा
वातावधूता ग्रथितेव माला ॥

(९)

सुप्तैक - हंसं कुमुदैरुपेतं
महा - ह्रद - स्थं सलिलं विभाति ।
घनैर्विमुक्तं निशि पूर्ण-चन्द्रं
तारा - गणाकीर्णमिवान्तरिक्षम् ॥

(१०)

नवैर्नदीनां कुसुम - प्रहासैर्
व्याधूयमानैर् मृदु - मारुतेन ।
धौतामल - क्षौम - पट प्रकाशैः
कूलानि काशैरुपशोभितानि ॥

(११)

जलं प्रसन्नं, कुसुम-प्रहासः
क्रौञ्च-स्वनं, शालिवनं विपक्वम् ।
मृदुश् च वायुर, विमलश् च चन्द्रः
शंसन्ति वर्ष - व्यपनीत - कालम् ॥

(१२)

लोकं सु-वृष्ट्या परितोषयित्वा
नदीस् तटाकानि च पूरयित्वा ।
निष्पन्न - सस्यां वसुधां च कृत्वा
त्यक्त्वा नभस् तोय-धराः प्रनष्टाः ॥

अभ्यास

(१)

(१) **शब्दार्थ लिखो--**

निदाघ, उपगूढ़, प्लवंगम कह्लार, प्रसन्न, क्षौमः, काश, तटाक, निष्पन्न, प्रनष्ट ।

(२) चन्द्रमा और जल के वाचक जितने शब्द जानते हो, उन सबको लिखो।

(२)

(१) शब्द रूप लिखो—
रजस् (तृतीया), नभस् (द्वितीया); दिश् (सप्तमी)।

(२) धातु-रूप लिखो—
भा (लङ् अन्यपुरुष), भुज् (लट् उत्तमपुरुष), उप + इ (लोट् मध्यमपुरुष)।

(३) समास-विग्रह करो—
स-हिमः, तमोविलिप्ता, प्रनष्ट-कूलाः, तारागणाकीर्णम्, ह्रदस्थं।

(४) इस पाठ में जितने भूतकृदन्त और पूर्वकालिक कृदन्त हों, उनको चुनो और उनके उपसर्गों तथा धातुओं को बताओ।

(३)

(१) वर्षा और शरद् का आरम्भ कैसे सूचित होता है? इनके आरम्भ में जो लक्षण दिखायी पड़ते हों, उनका उल्लेख संस्कृत में करो।

(२) रामायण के इन वर्णनों का अनुसरण करते हुए शीतकाल का संक्षिप्त वर्णन संस्कृत में करो।

(३) इन कर्ताओं की क्रियाएं लिखकर वाक्य बनाओ—
१. नभः मेघैः........ २. नदीषु सलिलं........ ३. मयूरा........
४. नदीनां कुलानि........ ५. सारसाः नभे........ ६. काशाः मारुतेन........ ७. पृथ्वी सस्येन........ ८. कुसुमानि वनेषु........।

(४)

(१) रामायण का अनुसरण करते हुए वर्षा और शरद् के वर्णन लिखो।

(२) पद्य ५ में कौनसा अलंकार है ? उसकी विशेषता बताओ।

(३) रामायण के किष्किन्धाकांड (अध्याय २८ और ३०) में वर्षा और शरद् के वर्णनों को पढ़ो।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. वाल्मीकीय रामायणम्—सातवलेकर कृत हिन्दी-अनुवाद सहित, १० भाग (वैदिक स्वाध्याय मण्डल, पारडी, सूरत)।

२. वाल्मीकीय रामायण—हिन्दी-अनुवाद (इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद)।

३. संक्षिप्तं वाल्मीकीय रामायणम्—हिन्दी-अनुवाद सहित, शान्तिकुमार व्यास (ओरियंटल बुक डिपो, दिल्ली)।

४. वाल्मीकि-रामायण—किष्किन्धाकांड हिन्दी-टीका (रामनारायणलाल इलाहाबाद)।

वाल्मीकीय रामायण—हिन्दी-अनुवाद सहित (पण्डित प्रेस, वाराणसी)।

६. वाल्मीकीय रामायण—हिन्दी-अनुवाद (गीता प्रेस, गोरखपुर)।

: २१ :

कन्या-परीक्षा

(दशकुमारचरितात्)

[संस्कृत के गद्य-लेखकों में दण्डी का महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन विद्वानों में उनका बहुत सम्मान था। उनके लिखे हुए तीन ग्रन्थ मिलते हैं—१. काव्यादर्श, २. अवन्तिसुन्दरी-कथा, ३. दशकुमार-चरित। काव्यादर्श साहित्यशास्त्र का प्रारम्भिक ग्रन्थ है जिसमें काव्य के गुणों; दोषों और अलंकारों का विस्तृत विवेचन है। कवि का यह ग्रन्थ बहुत लोक-प्रिय हुआ। अवन्तिसुन्दरी-कथा और दशकुमार-चरित गद्य में लिखे हुए कथा-ग्रन्थ हैं।

दशकुमार-चरित में दस राजकुमारों की कथाएँ हैं; दसों राजकुमार एक-एक करके अपने मुख से अपनी भ्रमण-कहानी सुनाते हैं। ग्रन्थ में किया हुआ समाज का चित्रण यथार्थवादी है।

संकलित अंश दशकुमार-चरित के छठे उच्छ्वास (मित्रगुप्त-चरित) से संक्षिप्त करके लिया गया है। इसमें एक आदर्श गृहिणी के गुणों का चित्र अंकित हुआ है। चतुर गृहिणी किस प्रकार साधारण सामग्री से सुस्वादु और तृप्तिकारक भोजन बना सकती है, इसका वर्णन बड़े ही रोचक ढंग से किया गया है।]

अस्ति द्रविडेषु काञ्ची नाम नगरी। तस्याम् अनेक-कोटि-सारः श्रेष्ठि-पुत्रः शक्तिकुमारो नामासीत्। सोऽष्टादश-वर्ष-देशीयश् चिन्ताम् आपेदे-नास्त्यदाराणाम् अननुगुण-दाराणां वासुखं नाम, तत् कथं नु गुणवद् विन्देयं कलत्रम् इति। अथ पर-प्रत्ययाहृतेषु दारेषु यादृच्छिकी संपत्तिम् अनभिसमीक्ष्य

कार्तान्तिको नाम भूत्वा वस्त्रान्त-पिनद्ध-शालि-प्रस्थो भुवं बभ्राम। लक्षणज्ञोऽयम् इत्यमुष्मै कन्याः कन्यावन्तः प्रदर्शयाम्बभूवुः। यां काञ्चिल् लक्षणवतीं स-वर्णां कन्यां दृष्ट्वा स किल स्म ब्रवीति—भद्रे ! शक्नोषि किमनेन शालि-प्रस्थेन गुणवदन्नम् अस्मान् अभ्यवहारयितुम् ? इति। सहसितावधूतो गृहाद् गृहं प्रविश्याभ्रमत्।

एकदा तु शिबिषु कावेरी-दक्षिण-तीरेषु पत्तने सह पितृभ्याम् अवसित-महर्धिम् अवशीर्ण-भवन-सारां धात्र्या प्रदर्श्यमानां काञ्चन विरल-भूषणां कुमारीं ददर्श। अस्यां संसक्त-चक्षुश् चातर्कयत—अस्याः खलु कन्यकायाः सर्व एवावयवा नातिस्थूला नातिकृशा नातिह्रस्वा नातिदीर्घा न विकटा मृजावन्तश्च। सेयम् आकृतिर्न व्यभिचरति शीलम्। तत् परीक्ष्य एनाम् उद्वहेयम्। अविमृश्य-कारिणां हि नियतम् अनेकाः पतन्त्यनुशय-परम्पराः। इति। स्निग्ध-दृष्टिर् आचष्ट-भद्रे ! कच्चिदस्ति कौशलं शालि-प्रस्थेनानेन सम्पन्नम् आहारम् अस्मान् अभ्यवहारयितुम् इति। ततस् तया वृद्ध-दासी साकूतम् आलोकिता। तस्य हस्तात् प्रस्थ-मात्रं धान्यमादाय क्वचिद् अलिन्दोद्देशे सु-सिक्त-संमृष्टे दत्त-पाद-शौचम् उपावेशयत्।

सा कन्या तान् गन्ध-शालीन् संक्षुद्य तुषेरखण्डैस् तण्डुलान् पृथक् चकार। जगाद च धात्रीम्—एभिस् तुषैर् अर्थिनो भूषण-मृजा-क्रिया-क्षमैः स्वर्णकाराः। तेभ्य इमान् दत्त्वा लब्धाभिः काकिणीभिः स्थिरतराणि अनत्यार्द्राणि नाति-शुष्काणि काष्ठानि, मितम्पचां स्थालीम्, उभे शरावे चाहर। इति।

तथा कृते तया, तांस्तण्डुलान् उलूखले मुसलेन अङ्गुली-

भिर् उद्धृत्योद्धृत्य अवहृत्य, शूर्प-शोधित-कण-किशारुकांस् तण्डुलान् असकृद् अद्भिः प्रक्षाल्य क्वथित-पञ्च-गुणे जले दत्त-चुल्ली-पूजा प्राक्षिपत्। प्रश्लथावयवेषु स्फुरत्सु तण्डुलेषु मुकुलावस्थाम् अति-वर्तमानेषु संक्षिप्य अनलम् उपहित-मुख-पिधानया स्थाल्या अन्न-मण्डम् अगालयत्। दर्व्या चावघट्ट्य मात्रया परिवर्त्य सम-पक्वेषु सिक्थेषु तां स्थालीम अधो-मुखीम् अतिष्ठिपत्।

इन्धनानि अन्तःसाराणि अम्भसा समभ्युक्ष्य प्रशमिताग्नीनि कृष्णाङ्गारीकृत्य तदर्थिभ्यः प्राहिणोत्—एभिर्लब्धाः काकिणीर् दत्त्वा शाकं घृतं दधि तैलम् आमलकं चिञ्चा-फलं च यथा-लाभम् आनय। इति।

तथानुष्ठिते च तया द्वि-त्रान् उपदंशान् उपपाद्य, तदन्न-मण्डम् आर्द्र-बालुकोपहित-नव-शराव-गतम् अति-मृदुना ताल-वृन्तानिलेन शीतलीकृत्य, स-लवण-संभारं दत्ताङ्गार-धूप-वासं च संपाद्य, तदापि आमलकं श्लक्ष्ण-पिष्टम् उत्पल-गन्धि कृत्वा, धात्री-मुखेन स्नानाय तमनोदयत्। तया च स्नान-शुद्धया दत्त-तैलामलकः क्रमेण सस्नौ।

स्नातः सिक्त-मृष्टे कुट्टिमे फलकमारुह्य अतिष्ठत्। सा तु तां पेयाम् एव अग्रे समुपाहरत्। पीत्वा चापनीताध्व-क्लमः प्रहृष्टः स्थितोऽभूत्।

ततस्तस्य शाल्योदनस्य दर्वी-द्वयं दत्त्वा सर्पिर्मात्रां सूपम् उपदंशं चोपजहार। इमं च दध्ना च त्रि-जातकावचूर्णितेन सुरभि-शीतलाभ्यां कालशेय-कञ्जिकाभ्यां शेषम् अन्नम् अभोजयत्।

शेस-ष एव अन्धसि असावतृप्यत्। अयाचत च पानीयम्।

अथ नव-भङ्गार-संभृतम् अगुरु-धूप-धूपितं कुसुम-वासितं वारि नाली-धारात्मना पातयाम्बभूव। सोऽपि तदच्छं पानीयम् आकण्ठं पपौ। शिरःकम्प-संज्ञा-वारिता च पुनर् अपकरकेण आचमनम अदत्त कन्या।

वृद्धया तु तदुच्छिष्टम् अपोह्य हरित-गोमयोपलिप्ते कुट्टिमे स्वमेव उत्तरीय-कर्पटं व्यवधाय क्षणम् अशेत। परितुष्टश्च विधिवद् उपयम्य कन्यां निन्ये।

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ लिखो—
विन्देयम्, मृजावन्तः, अनुशयः, अलिन्दोद्देशे, किशारुक, असकृत्, दर्वी, सिक्थ, समभ्युक्ष्य, उपदंश, श्लक्ष्ण-पिष्ट, सर्पिः, त्रिजातक, अन्धः, अच्छ।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—
काञ्चिल्लक्षणवतीम्, महर्धिः, इन्धनान्यन्तःसाराण्यम्भसा।

(२) समास-विग्रह करो—
अदाराणाम्, हसितावधूतः, विरल-भूषणाम्, अविमृश्यकारिणाम्, द्विव्रान्, अपनीताध्वक्लमः, दर्वीद्वयं, आकण्ठं।

(३) प्रकृति प्रत्यय बताओ—
कार्तान्तिक, पिनद्ध, अभ्यवहारयितुम्, उद्धृत्य, वारिता, उच्छिष्ट।

(४) ये रूप किन-किन धातुओं के हैं? काल और पुरुष का भी निर्देश करो—
बभ्राम, व्यभिचरति उपावेशयत्, अतिष्ठिपत, सस्नौ, उपजहारः।

(५) ये रूप किन-किन शब्दों के हैं ? उन शब्दों के रूप प्रथमा विभक्ति में लिखो।

गुणवन्तम्, धात्र्या, अर्थिनः, अद्भिः दध्ना।

(३)

(१) इस कथा को संक्षेप में लिखो।

(२) निम्नलिखित शब्दों के आगे कृदन्त जोड़कर वाक्य पूरे करो—

१. तया तण्डुला मुशलेन ········, असकृद् अद्भि········; क्वथित-पंचगुण-जले········।

२. ततस्तया अनलः········, इन्धनानि········तदर्थिभ्यश्········।

(४)

(१) शक्तिकुमार ने आदर्श गृहिणी की परीक्षा कैसे की ?

(२) कन्या ने किस प्रकार 'संपन्न आहार' तैयार किया ?

(३) इस कथा से क्या शिक्षा मिलती है ?

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. दशकुमार-चरित—संस्कृत-अंग्रेजी नोट सहित, काले कृत।

२. दशकुमार-चरित—हिन्दी अनुवाद (राजकमल, दिल्ली)।

३. दशकुमार-चरित—हिन्दी अनुवाद (राजपाल, दिल्ली)।

४. दशकुमार-चरित—अंग्रेजी अनुवाद (Jaico Books)

५. दशकुमार-चरित—टीका, अंग्रेजी अनुवाद तथा टिप्पणियों सहित (V. Ramaswamy Sastrulu & Sons, Madras)

६. दशकुमार-चरित—संस्कृत टीका और अनुवाद सहित (चौखम्भा संस्कृत सीरीज, वाराणसी)।

: २२ :

सुभाषितानि (४)

(१)

निन्दन्तु नीति-निपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु व यथेष्टम् ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात् पथः प्रविचलति पदं न धीराः ॥

(२)

प्रारभ्यते न खलु विघ्न-भयेन नीचैः
प्रारभ्य विघ्न-विहता विरमन्ति मध्याः ।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारब्धमुत्तम-जना न परित्यजन्ति ॥

(३)

अद्यापि नोज्झति हरः किल कालकूटं
कूर्मो बिभर्ति धरणीं खलु पृष्ठ-भागे ।
अम्भोनिधिर् वहति दुर्वह-वाडवाग्नि-
मङ्गीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति ॥

(४)

पद्माकरं दिनकरो बिकचीकरोति
चन्द्रो विकासयति कैरव-चक्रवालम् ।

नाभ्यर्थितो जलधरोऽपि जलं ददाति
सन्तः स्वयं पर-हितेषु कृताभियोगाः ॥

(५)

मातेव रक्षति, पितेव हिते नियुङ्क्ते
कान्तेव चाभिरमयत्यपनीय खेदम् ।
लक्ष्मीं तनोति, वितनोति च दिक्षु कीर्ति
किं-किं न साधयति कल्पलतेव विद्या ॥

(६)

जाड्यं धियो हरति, सिञ्चति वाचि सत्यं
मानोन्नतिं दिशति, पापमपाकरोति ।
चेतः प्रसादयति, दिक्षु तनोति कीर्ति
सत्संगतिः कथय, किं करोति पुंसाम् ॥

(७)

यः प्रीणयेत् सु-चरितैः पितरं स पुत्रः
यद् भर्तुरेव हितमिच्छति तत् कलत्रम् ।
तन् मित्रमापदि सुखे च सम-क्रियं यद्
एतत् त्रयं जगति पुण्य-कृतो लभन्ते ॥

(८)

पापान् निवारयति, योजयते हिताय
गुह्यं च गूहति, गुणान् प्रकटीकरोति ।
आपद्-गतं च न जहाति, ददाति काले
सन्मित्र-लक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः ॥

(६)

रात्रिर् गमिष्यति भविष्यति सु-प्रभातं
भास्वानुदेष्यति, हसिष्यति पङ्कज-श्रीः ।
इत्थं विचारयति कोष-गते द्विरेफे
हा ! हन्त ! हन्त ! नलिनीं गज उज्जहार ॥

(१०)

मनसि वचसि काये पुण्य-पीयूष-पूर्णास्
त्रि-भुवनमुपकार-श्रेणिभिः प्रीणयन्तः ।
पर-गुण-परमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यं
निज-हृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः ॥

(११)

उचितमनुचितं वा कुर्वता कार्य-जातं
परिणतिरवधार्या यत्नतः पण्डितेन ।
अति-रभस-कृतानां कर्मणामाविपत्तेर्
भवति हृदय-दाही शल्य-तुल्यो विपाकः ॥

(१२)

प्रिया न्याय्या वृत्तिर्, मलिनमसु-भङ्गेऽप्यसुकरं,
असन्तो नाऽभ्यर्थ्याः, सुहृदपि न याच्यः कृश-धनः ।
विपद्युच्चैः स्थेयं, पदमनुविधेयं च महतां,
सतां केनोद्दिष्टं विषममसि-धारा-व्रतमिदम् ॥

(१३)

प्रदानं प्रच्छन्नं, गृहमुपगते संभ्रम-विधिः,
प्रियंकृत्वा मौनं, सदसि कथनं नाऽप्युपकृतेः ।

अनुत्सेको लक्ष्म्यां, निरभिभव-साराः पर-कथाः,
सतां केनोदिष्टं विषममसि-धारा-व्रतमिदम् ॥

(१४)

क्वचिद् भूमौ शायी, क्वचिदपि च पर्यङ्क-शयनः,
क्वचिच् शाकाहारी, क्वचिदपि च शाल्योदन-रुचिः ।
क्वचित् कन्था-धारी, क्वचिदपि च दिव्याम्बर-धरो,
मनस्वी कार्यार्थी गणयति न दुःखं न च सुखम् ॥

(१)

एते सत्पुरुषाः परार्थ-घटकाः स्वार्थं समुत्सृज्य ये,
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये ।
तेऽमी मानव-राक्षसाः पर-हितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये,
ये तु घ्नन्ति निरर्थकं पर-हितं ते के न जानीमहे ॥

(१६)

सानन्दं सदनं, सुताश्च सुधियः, कान्ता न दुर्भाषिणी,
सन् मित्रं, सु-धनं, स्व-योषिति रतिश् चाज्ञा-पराः सेवकाः ।
आतिथ्यं, शिव-पूजनं प्रतिदिनं, मिष्टान्न-पानं गृहे,
साधोः संगमुपासते हि सततं, धन्यो गृहस्थाश्रमः ॥

(१७)

ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता, शौर्यस्य वाक्-संयमो,
ज्ञानस्योपशमः, कुलस्य विनयो, वित्तस्य पात्रे व्ययः ।
अक्रोधस् तपसः, क्षमा बलवतां, धर्मस्य निर्व्याजता,
सर्वेषामपि सर्व-कारणमिदं शीलं परं भूषणम् ॥

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ बताओ—
न्याय्य, पद, उज्झति, अभियोग, परिणति, रभस, आविपत्तः, विपाक, अनुत्सेक, निरभिभवसारा, मनस्वी ।

(२) सूर्य और कमल के जितने पर्याय-शब्द जानते हो लिखो ।

(२)

(१) इन रूपों के धातु, वाच्य, काल, पुरुष और वचन बताओ—
बिभर्ति, नियुङ्क्ते, प्रीणयेत्, जहाति, घ्नन्ति, जानीमहे ।

(२) इन शब्दों के लिंग बताओ—मित्र, कमल ।

(३) समास विग्रह करो—
नीति-निपुणाः, विघ्न-विहताः, अम्भोनिधिः, मानोन्नति, समक्रियः, पुण्य-कृतः, त्रिभुवनम् पुण्य-पीयूष-पूर्णाः, निज-हृदि ।

(४) भाव-वाचक संज्ञाएँ बताओ—
जड, सुजन, सुहृद्, ईश्वर, शूर, अतिथि, मधुर, निपुण ।

(५) विशेषण बताओ—
न्याय, पाप, आनन्द, शरीर, वर्ष, चन्द्र, भारत, स्वर्ग ।

(३)

(१) संस्कृत में रूपान्तरित करो—
१. संवत् दो हजार चार में भारत स्वतन्त्र हुआ ।
२. संवत् उन्नीस सौ इकसठ के पौष मास में तुम्हारा जन्म हुआ ।

(२) पद्य ६ का भावार्थ संस्कृत में लिखो ।

(४)

(१) सुखी जीवन के लक्षण लिखो ।

(२) असि-धारा-व्रत किसे कहते हैं ?

(३) अद्यापि नोज्झति हरः किल कालकूटं—इसकी कथा लिखो ।

(४) इस पाठ के जो पद्य सबसे अधिक रुचते हों, उन्हें कण्ठस्थ करो ।

: २३ :

अनुशासनम्

(तैत्तिरीयोपनिषदः)

[यह अंश तैत्तिरीयोपनिषद् से उद्धृत किया गया है। तैत्तिरीय उपनिषद् की गिनती प्रमुख दस उपनिषदों में है। कृष्ण-यजुर्वेद की तित्तिरि शाखा से सम्बद्ध होने के कारण इसका यह नाम पड़ा। इसकी शैली सरल होने से वर्ण्य विषय को हृदयंगम करने में कठिनता नहीं होती।

संकलित अंश दीक्षान्त-उपदेश है जो विद्याध्ययन की समाप्ति के पश्चात् स्नातकों को दिया जाता था। इसमें कही हुई बातें जीवन के लौकिक और पारमार्थिक दोनों पक्षों में सच्चे पथ-प्रदर्शक का काम देने वाली हैं।]

वेदमनूच्याचार्योऽन्ते-वासिनम् अनुशास्ति—सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजा-तन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। कुशलान्न प्रमदितव्यम्। भूत्यै न प्रमदितव्यम्। स्वाध्याय-प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्। देव-पितृ-कार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्।

मातृ-देवो भव। पितृ-देवो भव। आचार्य-देवो भव। अतिथि-देवो भव। यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि, नो इतराणि।

यान्यस्माकं सु-चरितानि तानि त्वयोपास्यानि, नो इतराणि।

ये के चास्मच्छ्रेयांसो ब्राह्मणास्तेषां त्वयासनेन प्रश्वसितव्यम्।

श्रद्धया देयम् । अश्रद्धयादेयम् । श्रिया देयम् । ह्रिया देयम् । भिया देयम् । संविदा देयम् ।

अथ यदि ते कर्म-विचिकित्सा वा वृत्त-विचिकित्सा वा स्यात् । ये तत्र ब्राह्मणाः संमर्शिनः स्युः । यथा ते तत्र वर्तेरन् तथा तत्र वर्तेथाः ।

एष आदेशः । एष उपदेशः । एषा वेदोपनिषत् । एतदनुशासनम् । एवमुपासितव्यम् । एवं चैतदुपास्यम् ।

अभ्यास

(१)

(१) **शब्दार्थ लिखो—**

स्वाध्याय, प्रवचन, पितृदेव, प्रश्वसितव्यम्, विचिकित्सा, संमर्शिनः, उपनिषत् ।

(२)

(१) **संधि करो—**

अस्मत् + श्रेयांसः, अश्रद्धया + अदेयम्, त्वया + उपास्यानि, एषः + आदेशः ।

(२) **समास विग्रह करो—**

स्वाध्यायः, स्वाध्याय-प्रवचनाभ्याम्, देवपितृकार्याभ्यां, मातृदेवः, अनवद्यानि, सुचरितानि, वृत्त-विचिकित्सा, वेदोपनिषत् ।

(३) इस पाठ में जो विधि-कृदन्त आये हों, उनका और उनकी धातुओं तथा प्रत्ययों का निर्देश करो ।

(४) ये रूप किस धातु के और कहाँ के हैं ?

अनुशासित, व्यवत्छेत्सीः, प्रमदः, वर्त्तेरन् ।

(३)

(१) निम्नलिखित वाक्यों में विधि-कृदन्त रूपों के स्थान पर विधिकाल (लिङ्लकार) के रूपों का प्रयोग करके नये वाक्य बनाओ—
सत्यान्न न प्रमदितव्यम्। तानि सेवितव्यानि। तानि त्वयोपास्यानि। श्रद्धया देयम्। अश्रद्धयादेयम्।

(४)

(१) वह उपदेश किसके द्वारा, किसको, किस अवसर पर, दिया गया है?
(२) गृहस्थ को किन-किन बातों से प्रमाद नहीं करना चाहिए?
(३) माता-पिता को देवता समझो, इस वाक्य का क्या अभिप्राय है?
(४) गुरुजनों के कैसे कार्यों का अनुसरण करना चाहिए?
(५) आचरण के विषय में संदेह होने पर क्या करना चाहिए?

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. तैत्तिरीयोपनिषद्—शांकर भाष्य और हिन्दी अनुवाद (गीता प्रेस, गोरखपुर)।

: २४ :

चरैवेति

(ऐतरेय-ब्राह्मणात्)

[यह अंश ऐतरेय ब्राह्मण से संकलित किया गया है। वेद के तीन विभाग कहे गये हैं—१. संहिता, २. ब्राह्मण ३. आरण्यक। संहिता में देवताओं की स्तुतियों के मंत्रों का संग्रह है; ब्राह्मणों में यज्ञादि कर्मों की विधियाँ तथा तत्सम्बन्धी आख्यान आदि बातें हैं। और आरण्यक घर-गाँव छोड़कर वनों में बसे हुए लोगों के चिन्तन के ग्रन्थ हैं, उनमें यज्ञों के आध्यात्मिक रूप का विवेचन है। आरण्यकों के अन्तिम भाग उपनिषद् हैं जिनमें आत्मा, परमात्मा, जगत् आदि का विवेचन किया गया है।

चारों वेदों के अलग-अलग ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् हैं। ऐतरेय ब्राह्मण ऋग्वेद से सम्बन्ध रखता है। इतरा के पुत्र महीदास ऐतरेय को प्राप्त होने के कारण यह ऐतरेय कहलाया।

ऐतरेय ब्राह्मण के इस सुन्दर गीत में इन्द्र ने हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहित को निरन्तर चलते रहने की शिक्षा दी है। गीत का भाव यह है। जीवन में सदा चलते रहो, क्योंकि चलने का नाम ही जीवन है; ठहरा हुआ जीवन सड़ जाता है, जैसे ठहरा हुआ जल सड़ जाता है, जो पुरुष जीवन में चलता नहीं, बैठा रहता है, श्रम करने से पीछे हटता है, वह पापी है; पर श्रम करने वाले के पाप उसके श्रम द्वारा स्वतः नष्ट हो जाते हैं।]

(१)

नानाश्रान्ताय श्रीरस्ति इति रोहित ! शुश्रुमः ।
पापो नृषद्वरो जन इंद्र इच् चरतः सखा ॥
चरैवेति चरैवेति ॥

(२)

पुष्पिण्यौ चरतो जङ्घे भूष्णुरात्मा फल ग्रहिः ।
शेरेऽस्य सर्व-पाप्मानः श्रमेण प्रपथे हताः ॥
चरैवेति चरैवेति ॥

(३)

आस्ते भग आसीनस्य ऊर्ध्वस् तिष्ठति तिष्ठतः ।
शेते निपद्यमानस्य चराति चरतो भगः ॥
चरैवेति चरैवेति ॥

(४)

कलिः शयानो भवति संजिहानस्तु द्वापरः ।
उत्तिष्ठंस् त्रेता भवति कृतं संपद्यते चरन् ॥
चरैवेति चरैवेति ॥

(५)

चरन् वै मधु विन्दति चरन् स्वादुमुदुम्बरम् ।
सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते चरन् ॥
चरैवेति चरैवेति ॥

अभ्यास

(१)

(१) **शब्दार्थ लिखो—**

अनाश्रान्तः, नृषद्वरः, इत्, पुष्पिण्यौ, पाप्मानः; निपद्यमानस्य, संजिहानः; श्रेमाणम् ।

(२) जिन शब्दों का प्रयोग साधारण संस्कृत में नहीं होता, ऐसे शब्दों को चुनो ।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—
नानाश्रान्ताय, इच्चरत, उत्तिष्ठंस्त्रेता ।

(२) समास-विग्रह करो—
अनाश्रान्तः, नृषद्, फलग्रहिः ।

(३) ये रूप किस धातु के हैं ? काल, पुरुष और वचन का भी निर्देश करो—
शुश्रुम:, शेरे, शेते:, चराति, संपद्यते, विन्दति, तन्द्रयते ।

(४) प्रकृति और प्रत्यय का निर्देश करो—
पुष्पिण्यौ, श्रेमाणं, चरत:, भूष्णु:, आसीनः, तिष्ठतः, शयानः, चरन्:, उत्तिष्ठन् ।

(३)

(१) श्रम की महिमा पर संस्कृत में पांच वाक्य लिखो ।

(४)

(१) इस गीत का केन्द्रीय भाव क्या है ?

(२) 'फिरै सो चरै' इस राजस्थानी कहावत को शीर्षक बनाकर एक छोटा-सा निबन्ध लिखो ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. ऐतरेय ब्राह्मण—सायण भाष्य ।
२ ऐतरेय ब्राह्मण—हिन्दी-अनुवाद, गंगाप्रसाद उपाध्याय
३. Keith : Two Brahmanas of Rig Veda.
४. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ४८ (स. २००० वि.) ।
५. भगवत ,स्कन्ध ६ अध्याय ७

मंगलम्

(१)

स्वस्ति प्रजाभ्यः, परिपालयन्तां
न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः।
गो-ब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ॥

(२)

काले वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी सस्य-शालिनी ।
देशोऽयं क्षोभ-रहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः ॥

(३)

क्षीरिण्यः सन्तु गावो, भवतु वसुमती सर्व-संपन्न-सस्या
पर्जन्यः काल-वर्षी, सकल-जन-मनो-नन्दिनो वान्तु वाताः
मोदन्तां जन्म-भाजः, सततमभिमता ब्राह्मणाः सन्तु सन्तः
श्रीमन्तः पान्तु पृथ्वीं प्रशमित-रिपवो धर्मनिष्ठाश्च भूपाः ॥

(४)

सर्वे च सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख-भाग् भवेत् ॥

(५)

सर्वस् तरतु दुर्गाणि सर्वो भद्राणि पश्यतु ।
सर्वः सुखमवाप्नोतु सर्वः सर्वत्र नन्दतु ॥

अभ्यास

(१)

(१) शब्दों के अर्थ लिखो—

क्षीरिण्यः, वसुमती, पर्जन्यः, जन्मभाजः, अभिमताः, भद्राणि, दुर्गाणि

(२) आनन्द और सुख के वाचक जितने शब्द जानते हो, उनको लिखो।

(३) पर्जन्य के पर्यायवाची शब्द लिखो।

(२)

(१) समास-विग्रह करो—

गो-ब्राह्मणेभ्यः, काल-वर्षी, सकल-जन-मनो-नन्दिनः, जन्म-भाजः, प्रशमित-रिपवः, भूपाः, क्षोभ-रहितः, निर्भयाः, निरामयाः, दुःख-भाक्

(२) प्रकृति और प्रत्यय बताओ—

सुखिनः, क्षीरिण्यः, श्रीमन्तः, संपन्नः, वर्षी, नन्दिनः, अभिमताः, सन्तः, निष्ठाः।

(३) नीचे लिखे रूपों के वाच्य, काल, पुरुष और वचन बताओ—

परिपालयन्ताम्, अस्तु, सन्तु, वान्तु, मोदन्ताम्, भवेत्, अवाप्नोतु; नन्दतु।

(४) निम्नलिखित शब्द-रूपों के विभक्ति, वचन, लिंग बताओ—

प्रजाभ्यः, सुखिनः, निरामयाः, कश्चित्, भद्राणि।

(५) स्थानवाचक और कालवाचक सार्वनामिक क्रियाविशेषण लिखो। (तत्र, तदा, इत्यादि)।

(३)

(१) श्लोक ३ का वाच्य-परिवर्तन करो।

(२) इस पाठ की कामनाओं को संक्षेप में अपने शब्दों में लिखो।

(४)

(१) लोक के लिए आप क्या-क्या कल्याण-कामनाएँ करेंगे ?

(२) इस पाठ में उद्धृत कल्याण-कामनाओं से भारतीय संस्कृति पर क्या प्रकाश पड़ता है ?

इन पद्यों को कण्ठस्थ करो।

टिप्पणियाँ

१. मंगलम्

१. **बन्धुः**—बान्धवः, । **द्रविणं**—द्रव्यं, धनं । **देव-देव**—देवानां देव। इति देवदेवः तस्य संबोधने ।

२. **समुपासते**—सम + उप + आस् (२ आ०)—उपासना करते हैं। **शिव इति**—शिव कहकर। **प्रमाण-पटवः**—तर्क करने में चतुर। **कर्ता इ०**—न्याय के विद्वानों के अनुसार ईश्वर जगत् का कर्ता है। **अर्हन्नित्यथ**—अर्हन् + इति + कथ। **अर्हत्**—सम्मान के योग्य,

सर्वज्ञो जित-रागादि-दोषस् त्रैलोक्य-पूजितः ।
यथा-स्थितार्थ-वादी च देवोऽर्हन् परमेश्वरः ॥

जैन-शासन-रताः—जैन धर्म के अनुयायी, जैनी। **अथ**—और। **कर्म इ०**—मीमांसा के अनुयायी वैदिक 'कर्म' को ही सब कुछ मानते हैं। **वाञ्छित**—अभीष्ट। **त्रैलोक्य**—त्रयाणां लोकानां समाहारः त्रिलोकी, तस्य भावः त्रैलोक्य, तीनों लोक (स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल)।

२. शालिवाहन-कथा

कोटिध्वजः—कोटीश्वर, करोड़पति, प्राचीनकाल में लखपति के घर पर निरन्तर दीप जलता था और करोड़पति के घर पर निरन्तर ध्वजा फहराती थी। **संभूय**—मिलकर। **स्थेयम्**—स्थातव्यम्। **मासमेकम्**—एक मास तक। **परमार्थ**—अभिप्राय। **प्रतिष्ठानपुर**—दक्षिण के पैठन नामक नगर। **सप्तधातवः**—सुवर्ण, रूप्य, ताम्र, लोह, नाग (सीसा); कथीर (रांगा), जस्ता।

३. मूषक-श्रेष्ठि-कथा

पंचत्वम् आगतः—मृतः। पाप—पापी। सकल—सब कुछ। वेश्मन्—घर। वृत्ति-निबंधनम्—जीवन-यात्रा का सहारा (means of support)। कृच्छ्र—कठिन। अभ्यर्थ्य—प्रार्थना करके। आकिंचन्य—अकिञ्चनस्य भावः, दरिद्रता। लिपि—लिखना। भाण्ड—व्यापार-सामग्री। भाण्ड-मूल्य—पूंजी। क्रुध्—क्रोध। पण्य—व्यापार की वस्तु। दीनार—एक सिक्का। दूरे तिष्ठतु—दूर रहा। भाण्ड-मूल्याय—पूंजी के रूप में। संपुटे—बही में। चणकाञ्जलि—चने की मुट्ठी। कृते—निमित्त। भृष्टान कृत्वा—भूनकर। अतिष्ठम्—मैं ठहर गया, बैठ गया। चत्वर—चौराहा। श्रान्तागत—जो थका हुआ आया। काष्ठ-भारिक—कठिहारा। प्रश्रय—विनय। अदाम—मैंने दिया, सामान्यभूत का रूप। काष्ठिक—कठिहारा। आपण—बाजार। स्तोक—थोड़ा। अन्येद्युः—दूसरे दिन। दारु—काठ। दिनत्रयम्—तीन दिन तक। छेद—अभाव। पण—एक सिक्का। विपणि—दुकान, वाणिज्य-व्यापार। सौवर्णः—सुवर्णस्य अयम्, सोने का। चित्रीयते—विस्मित होती है। कस्मात्—कैसे, क्यों। अभित्तौ इ०—बिना भीत (या आधार) के चित्र बिना देने से असम्भव कार्य करने से।

४. जन्म-बर्बर-कथा

बर्बर—मूर्ख। पदार्थ—शब्द के तात्पर्य को। अधिगच्छति—समझ पाता है, हृदयंगम कर पाता है। महता समयेन—बहुत समय के पश्चात्। कठिनी—खड़िया। संवादिनी वाक्—बात ठीक है। समुदितं वचः—ठीक कहा (सं+वद्+इत)। जात-रभसः—आवेश में भरकर। ऊह—कल्पना। यावद् दूरं—जहाँ तक। संवाद—बात का मेल खाना। तावत्-संवाद एव—तब तक मेल बैठता गया। विसंवाद—मेल न खाना। वृत्तः—जातः। गर्भे—भीतर। अभिधाय—कहकर। आज्ञप्—विदा करना। जीवनाय—जीवन भर। धन्यता—कृतार्थता।

५. नाहं बलाका

महातपाः—महत् तपः यस्य सः। बलाका—बगुली। आ + पद्—प्राप्त होना। क्षणं—क्षण भर। अद्भुतम्मन्यमानः—आश्चर्य करता हुआ। अग्निकार्यं—अग्नि-पूजा। अन्तिकं—निकट। बद्धाञ्जलि—हाथ जोड़े हुआ। अनन्यगोचर—जो मेरे अतिरिक्त और किसी को ज्ञात नहीं।

अपर—दूसरा, भिन्न। निरगात्—निर् + गम् का सामान्यभूत का रूप; निकला। निजगाद—नि + गद्, परोक्षभूत का रूप; बोला। परायणं—सबसे बड़ा आश्रय, पूज्यतम्। लालस्य—लालसा। श्रेयः—कल्याण। अनुशिष्ट—उपदेश दिया हुआ। गृहान्—घर को; नरजाति में गृह शब्द बहुवचन में प्रयुक्त होता है। अवाप्—अव + आप्, लिट्; पाया।

६. सुभाषितानि (१)

पात्रता—योग्यता, किसी वस्तु के प्राप्त करने की योग्यता। ततः—तस्माद्, उससे अर्थात् धर्म से। परं—बड़ा। यावज्जीवं—जीवन भर। क्षण-त्यागात्—एक-एक क्षण की परवाह न करने से। महाजन—महान् पुरुष। धत्ते—धा धातु, धारण करता है। सूनृता—मधुर और सत्य। उच्छिद्यन्ते—अभाव होता है। अनुष्ठान—आचरण। दाराः—स्त्री, यह शब्द सदा नारी जाति और बहुवचन में प्रयुक्त होता है। पाण्डुनन्दन—हे युधिष्ठिर। अवसीदति—दुःखी होता है। संहति—मेल। गुणत्वं इ०—रस्सी बने हुए। वर्तयन्ति—व्यवहार करते हैं। प्रसाद—प्रसन्नता। अव्यवस्थित—अस्थिर। यतः—क्योंकि। विषकुम्भं इ०—जिसके मुख पर दूध है ऐसा विष से भरा घड़ा। पिण्ड—अन्न-पिण्ड, भोजन। स्खलन—ठोकर खाना; गिरना। प्रमाद—असावधानी। समादधति—सम्हाल लेते हैं।

७. पण्डित-शत्रुः

योग—संयोग। चतुरः—चार, द्वितीया बहुवचन का रूप। साधु—

उचित, ठीक । मम चटितं—मेरे हाथ चढ़ा । समं—साथ । पल्लीपुर—झोंपड़ियों की बस्ती । ध्वांक्ष—काक । स-पाद-लक्ष—सवा लाख । बिभेषि—डरता है । बाल—हे मूर्ख । अब्द—वर्ष । ध्रुवं—निश्चित । भित्त्वा—भेदकर, पार करके । तदानुष्ठिते—वैसा करने पर । हित-कारक—हितकारी, हितैषी, मित्र । न मूर्खो इ०—इसकी कथा पञ्चतन्त्र में ठीक इस कथा के पूर्व आयी है ।

८. बहु-मान-कथानकम्

रोधस्—तट । उपपद—किसी दूसरे शब्द के पूर्व आने वाला शब्द । पलाशोपपदः कूटः—कूट जिसके आदि में पलाश शब्द है = पलाशकूट । बहुधनः—बहुत धनवाला । महत्तर—मेहता, सेठ । मानस—मन । सचिवोद्भूता—मंत्री की पुत्री । वंध्येति—वन्ध्या जानकर । गो-कुल—गायों का झुंड । अग्रणीः—मुखिया । वृषभध्वज—राजा का नाम । आस्ते—रहता है । भुञ्जानो—भोगता हुआ । राटि—राड़, झगड़ा । भाण्ड—बरतन । स्तोकमन्तरम्—थोड़ी दूर । बट्टलक—बाँटा, गायों को दिया जाने वाला ग्वार आदि भिगोया हुआ या उबाला हुआ अनाज । समर्प्य—सौंपकर । मन्दिर—घर । चषण—चबेना । शष्प—घास । उपचार—सेवा । मृष्ट—मीठा । स्वाहिताः—अपनी हितकारिणी । कुर्वते—करते हैं । अन्वहं—प्रतिदिन । तकया—तया, क स्वार्थिक प्रत्यय है जिसके जड़ने से अर्थ नहीं बदलता । संस्कार—सफाई । सका—सा, क स्वार्थिक प्रत्यय है । भूभुज्—राजा । निर्विकल्पं—निश्चित रूप से, बिना आगा-पीछा किये । तावत् आसन्—दूर रहे । पलं—पल भर । जन-वाक्यतः—लोगों के मुँह से । धव—पति । जीवित—जीवन ।

९. कपट-मित्रम्

अरण्यानी—वन-प्रदेश (राजस्थानी में रोह) । चिरात्—बहुत समय से । सम्बन्धु—बन्ध को प्राप्त कर । जीवलोकं इ०—फिर जीवित हुआ हूँ ।

अस्तंगते इ०—किरणों की मालावाले भगवान् सूर्य के अस्त होने पर। आगन्तु—आगन्तुक, आने वाला व्यक्ति। मार्जारस्य—कथा हितोपदेश में देखो। स्नेहानुवृत्तिः—स्नेह की निरन्तर गति; निरन्तर स्नेह। उदार-चरित—विशालहृदय। वसुधा—पृथ्वी। विस्रम्भालाप—विश्वासपूर्ण बात-चीत, घनिष्ठतापूर्ण वार्तालाप। अभिमत—अभीष्ट। निभृतं—एकान्त में। सस्य—धान; अनाज। फलिता—सफल हुई। उत्कृत्यमान—काटा जाता हुआ। असृक्—लोहू। व्यसन—आपत्ति, संकट। तिष्ठति—ठहरता है, साथ देता है। भट्टारकवार—रविवार। अवधीरित—अनादृत, तिरस्कृत। विश्रब्धे—विश्वास करने वाले के प्रति। असत्य-सन्ध—झूठी प्रतिज्ञा वाला। कृष्णायते—काला करता है। वातेन—हवा से। अश्नुते—पाता है।

१०. ऊर्जस्वलमुद्बोधनम्

राजन्या—क्षत्रिया। अपर्हे—गर्ह, धातु, लिट्, निन्दा की। औरस—पेट का; सगा। निर्जित—पराजित।

मा शेष्व—मत सो (शी धातु का आज्ञा का रूप)। अमित्र—शत्रु। अलातं—जलती लकड़ी। तिन्दुक—एक लकड़ी। मुहूर्त्तमपि—घड़ी भर ही थोड़ी देर ही। तुष—भूसा। अनर्चिः—लपटों से रहित होकर। धूमायस्व—धुँधवाना, धुँआ देना। चिरं—बहुत देर तक। ज्वलितं—जलना। श्रेय—अधिक। मा धूमायितं—धुँधुआना।

उद्भावय—प्रकट कर। वीर्य—वीरता, पराक्रम। तां गतिं—उस निश्चत गति को; मृत्यु को, जो सब प्राणियों को निश्चित रूप से आती है। अप्रतः—अलप (राजस्थानी आधो)। श्रुत—विद्या। पुमान्—(वास्तव में) पुरुष। सीमन्तिनी—नारी। मा धूमाय—धुँधुआ मत, खूब वेग से जल। शात्रवान्—शत्रुओं को। मूर्ध्नि—सिर र। एतावान्—एव—इतना ही, यही।

विहीयमान—छोड़ा जाता हुआ (वि+हा कर्मवाच्य शानच्)। परपिण्ड—दूसरों के अन्न से। कृपण—दीन। असत्त्व—शक्ति-हीन (spirit-

less)। अनुवर्तिथाः—अनुवर्तेथाः का आर्ष रूप, ग्रहण करो। अनुत्वा—तुम्हारे पीछे, तुम्हारे आश्रय में। शतक्रतु—इंद्र। आजीवन्ति—आश्रय में जाते हैं। अर्थवत्—सार्थक। विक्रान्त—पराक्रम। एध्—उन्नति करना। त्रिदश—देवता। साधु—श्रेष्ठ। अनुदुष्येयुः—दूषित हो जावें। संघात—मेल। काले—समय आने पर। व्यसन—संकट (सिंधुराज का)। अयम्—सिंधुराज। अन्वर्थनामा—सार्थक नाम वाला।

पर्याय-मरण—दूसरे शब्दों में मरण, मरण का ही दूसरा रूप। प्रियवादिन्—खुशामद करने वाला। जातु—निश्चय ही। परस्य इ०—दूसरे का अनुचर होकर। उद्यच्छेत्—उद्यम करे (उत् + यम धातु)। अपि—चाहे। अपर्वणि—जहाँ गाँठ न हो, जहाँ टूटने की संभावना न हो। भज्येत—टूट जाय। नमेत्—झुके। योक्तव्यं इ०—कल्याण के कामों में जुट जाना चाहिए। भविष्यति—सिद्ध होगा ही, ऐसा मन में दृढ़ निश्चय करके। अव्यथैः—व्यथा रहित होकर।

११. परशुरामस्य कोपः

जामदग्न्य—जमदग्नि के पुत्र, परशुराम। साटोपं—गर्व के साथ। हर-चाप—महादेव का धनुष। प्रतिजानीते—प्रति + ज्ञा धातु; प्रतिज्ञा करता है। अलम् इ०—इस विषय में उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। उपनीत-प्राप्त। अवलेप—गर्व। दुर्ललित—बिगड़ा हुआ, अशिष्ट। शतानन्द—जनक के पुरोहित। भवदुपाध्याय–तुम्हारे गुरु। अपि नाम–क्या। निवृत्ता–समाप्त हो गयी। श्रद्धा—इच्छा। ससंभ्रमम्—हड़बड़ी के साथ। आत्थ—कहते हो। अथ किम्—हाँ। वृत्तम्—हुआ। चंडिमा—प्रचंडता। भर्ग—शिव। पुरःसराः—आदि। कौशिक—विश्वामित्र। अग्रणीः—अगुआ। ग्रामणीः—मुखिया। प्रतीतं—समझा। उदासितुं—तटस्थ रहना। कृतागसि—कृतं आगः (अपराधः) येन तस्मिन्। दहन–अग्नि। आतंक—भय। कृत्वा—कोंकण को आठवाँ द्वीप बनाने के बाद, सप्तद्वीप वाली समस्त भूमि ब्राह्मणों को दान कर देने के बाद परशुराम ने अपने लिए

कोंकण की भूमि समुद्र से प्राप्त की थी। दृष्ट्या—सौभाग्य से। स्वस्ति—कल्याण हो, परशुराम क्षत्रिय कुल पर क्रुद्ध नहीं हुए। नियोगिनः—अधिकारी, कर्मचारी। कृत—जिनका विवाह-सम्बन्धी मंगल-कार्य पूर्ण हो गया है। स्वस्तिवाचनिकाः—स्वस्ति-वाचन क्रिया करने वाले। ब्रह्म-बन्धो—हे नीच ब्राह्मण। कीर्ति-दानेन—धनुष तोड़ने का यश देकर। भ्रान्तम्—भूल (गलती) की। संभ्रान्तं—आदर दिखाया, आदर दिखाते हुए बात में दखल नहीं दिया। शराग्रवर्तिनः—बाण के अग्र-भाग में रहने वाले (प्रताप) के। प्रताप-लेशस्य—थोड़े से प्रताप के (विशेस्थिताः सन्तः)। भुवः—उत्पन्न होने वाले। संजज्ञिरे—जन्म दिये गये। वधूजनेन—पत्नियों से। कुशिक इ०—राजा कुशिक के पुत्र विश्वामित्र का। तनूज—तनु और तन् दोनों शब्द होते हैं। विभाव्य—सोचकर। दुर्धर्षाः—दुर्जेय (तीनों पुर)। व्यस्त-क्रमं—एक साथ। विधातरि इव यत्र (यस्मिन्) वक्रतां प्राप्ते—विधाता की भाँति जिसके टेढ़े होने से (झुकने से, चढ़ने से)। तरसा—तुरन्त। पुरः—पुर् शब्द का प्रथमा बहुवचन का रूप। तिस्रः पुरः—त्रिपुरापुर के तीनों पुरों को महादेव ने एक ही बाण से जला दिया था। कार्मुक—धनुष। तर्कय—समझ लो। मच्छस्त्र इ०—मेरे शस्त्र की धारा के जल में। संरब्धः—क्रुद्ध।

१२. विद्वान् परिवारः

सिद्धि—सफलता। सत्त्व—शक्ति (spirit)। उपकरण—साधन। अशन—भोजन। एवंविधगुणः—इस प्रकार के गुणों वाला। अकृत—किया, सामान्यभूत आत्मनेपद का रूप। कर-कुहर—हथेली। यमित—जूते हुए। विफल—रहित। विपक्ष—शत्रु। पौलस्त्य—पुलस्त्य ऋषि का वंशज, रावण। सहाय—सहायक। स्नुषा—पुत्रवधू। भारती—सरस्वती। लीला-कृति—लीला (क्रीड़ा) के लिए धारण किया हुआ रूप। पौष्पं—पुष्पों का। मौर्वी—प्रत्यंचा। लीलादेवी—भोज की रानी का नाम। अनर्घ्य—अमूल्य। वैडूर्य—एक मणि। प्रवाल—मूंगा।

१३. कृतानि पुत्रैरकृतानि पूर्वैः

कृतानि इ०—पूर्वजों द्वारा न किये गये कामों को पुत्रों (वंशजों) ने किया। राज-शास्त्र—राजनीतिशास्त्र। वंश-करी—वंश का आरम्भ करने वाला। कालेन—समय पाकर। शुक्र—ये भृगु के पुत्र थे। बृहस्पति—ये अंगिरा के पुत्र थे। ससर्जतुः—सृज् का आर्ष रूप। ददृशुः—देखा, ऋषि का अर्थ देखने वाला (seer) होता है, वेदों के मंत्र ऋषियों द्वारा रचे हुए नहीं किन्तु देखे हुए माने जाते हैं। सारस्वत—एक ऋषि; एक बार बारह वर्ष का भयंकर अकाल पड़ा, उसमें ऋषि लोग प्राण रक्षा की चिन्ता में दशों दिशाओं में भटकते रहे; वेदों का स्वाध्याय छूट जाने से वे वेदों को भूल गये; सारस्वत ऋषि ने उन्हें याद रखा और अकाल के पश्चात् जब ऋषि लोग पुनः एकत्र हुए तो उन्हें फिर से वेदों का अध्ययन कराया (महाभारत; शल्यपर्व)। जगाद—कहा, प्रवचन किया। बहुधा चकार—चार संहिताओं में विभक्त किया। वसिष्ठ, शक्ति—दोनों व्यास के पूर्वज थे, शक्ति वशिष्ठ के पुत्र थे। नाद—वाणी। जग्रन्थ—ग्रन्थ् धातु, रचना। च्यवन—वाल्मीकि के पूर्वज। चिकित्सितं—चिकित्सा-शास्त्र। आत्रेय—अत्रि के वंशज, एक ऋषि। कुशिक—विश्वमित्र के पूर्वज। गाधिनः सूनुः—विश्वामित्र। राजन्—बुद्ध के जन्म के समय ब्राह्मण शुद्धोधन से कहते हैं। वेलां बबन्धे—सागर की मर्यादा नियत की। ऐक्ष्वाकवः—इक्ष्वाकुवंश के (राजा) लोग। द्विजानां—ब्राह्मणों का। आचार्यक—आचार्य-पद। जनक—मिथिला के राजा, जनक ने ब्राह्मणों को योग-विद्या सिखायी। शौरि—कृष्ण। शूर—कृष्ण के एक पूर्वज। अबलाः—असमर्थाः। प्रमाणं—निर्णायक बात (deciding factor)। कश्चित्—कोई भी। क्वचित्—कहीं भी, कभी भी। क्वच्छ्रैष्ठ्यम्—क्वचित् + श्रैष्ठ्यम्। श्रैष्ठ्यं—श्रेष्ठस्य भावः, श्रेष्ठता। राज्ञाम् ऋषीणां च—राजाओं और ऋषियों दोनों में। हितानि तानि—वे हितकारी कार्य। पाठान्तर—हि तानि तानि—वे-वे कार्य, ऐसे-ऐसे कार्य। राज्ञां ऋषीणां च तानि हितानि (अथवा तानि तानि हि) र्माणिक पूर्वैः अकृतानि पुत्रैः कृतानि—राजाओं को लें चाहे ऋषियों को।

उनके वे हितकारी कार्य (अथवा उनके वे वैसे-वैसे महत्त्वपूर्ण कार्य) जो पूर्वज नहीं कर पाये, पुत्रों ने पूरे किये।

१६. पराक्रमी बाल:

बटु—ब्रह्मचारी, विद्यार्थी। संभ्रान्ता:—व्यग्रा:, त्वरा वश-व्याकुला:। भूत—जीव। जनपद—जहाँ लोग रहते हैं, वन का विपरीत शब्द। समाम्नाय—नाम संग्रह-शास्त्र, सूची। साङ्ग्रामिके—युद्ध-विषयक शास्त्र में। धूनोति—धू धातु=हिलाना; धू धातु अनेक गणों में आती है जिससे उसके रूप अनेक प्रकार से होते हैं; ये विविध रूप निम्नांकित श्लोक में दिखाये गये हैं—

धूनोति चम्पक-वनानि धुनोत्यशोकं
चूतं धुनाति धुवति स्फुटितातिमुक्तम्।
वायुर् विधूनयति चम्पक-पुष्प-रेणून्
यत् कानने धवति चन्दन-मञ्जरीश्च॥

अजस्र—निरन्तर। शष्प—कोमल तृण, घास। अत्ति—अद्=खाना। प्रकिरति—प्र+कृत्=बिखराना, गिराना। शकृत्—लीद। आम्र-मात्रान्—आम के फल जितने। आख्यातैः—कहने से। एहि—आ+इ=ए धातु का आज्ञा का रूप, आओ। याम:—गच्छाम:, चलें। अजिन—मृगचर्म। आश्वमेधिक—अश्वमेध यज्ञ सम्बन्धी। कांड—प्रकरण। शतसंख्या:—सैकड़ों की संख्या वाले। तत्प्रायम्—प्रायः उतनी ही। बल—सेना। परिवृत—(रखवालों से) घिरा हुआ। ऊर्जस्वल—तेजस्वी। परिभावी—तिरस्कारकरनेवाला। उत्कर्ष-निकर्ष—श्रेष्ठता की कसौटी; पाठान्तर। उत्कर्ष-निष्कर्षः—श्रेष्ठता की पराकाष्ठा, बहुत बड़ा उत्कर्ष। सप्तलोकैक-वीरस्य—सातों लोक में एकमात्र वीर (का)। संदीपनानि—जलाने वाले, क्रोधोत्पादक (provoking)। अक्षराणि—वचनानि। महाराजं प्रति—हमारे महाराज (राम) के

सामने। जाल्म—दुष्ट। रोहित—हरिण। यदि—यदि नहीं हैं तो न हो। विभीषिका—धमकी। किम् इ०—कहने से क्या लाभ? संनिपत्य—धावा करके। नीरस—निर्दय। आयुधीय—शस्त्रधारी, सैनिक। श्रेणी—समूह। दृप्त—दर्पपूर्ण। चन्द्रकेतु—लक्ष्मण का पुत्र जो घोड़े की रक्षक सेना का सेनापति था। सौम्य—पूर्व दिशा स्थित सुन्दर वन को देखकर जिसका हृदय कौतूहलपूर्ण हो रहा है। तरु-गहन—पेड़ों के जंगल (के मार्ग) से। अपसर्पत—भाग जाओ। कृतम् इ०—रहने दो इस घोड़े को। विस्फुर्—चमकना। आश्रमपद—आश्रम का स्थान। प्लुत—छलांग। किं नाम—क्या शस्त्र चमक रहे हैं? (भाव यह है कि चमक रहे हों तो चमकने दो)।

१५. सुभाषितानि (२)

आत्मनः इ०—मिलाओ Do not do unto others as you would not like them to do unto you। समासेन—संक्षेप में। श्लाघ्य—माननीय, पूजनीय। निरस्तपादप—जहाँ पेड़ नहीं हैं। द्रुमायते—पेड़ गिना जाता है। वामि—नारी। अर्थ—अभीष्ट फल। क्लीब—कायर। लोक-रव—लोकनिन्दा। स्वनुष्ठितात्—अच्छी तरह पालन किये हुए। विगुण—गुणरहित। अवसादय्—कष्ट देना। तज्जयः—उन इन्द्रियों पर विजय। येन इ०—जिस मार्ग से जाना चाहो, उससे जाओ। जातु—निश्चय ही, कभी भी। कामः—कामना। कृष्णवर्त्मन्—अग्नि। कार्पण्य—कृपणता, दीनता। निर्वाण—बुझना। वृत्ति—दशा। विशीर्येत—मुरझा जाय। सूत—एक जाति जो रथ चलाने का कार्य करती थी। सूतो वा—कर्ण की उक्ति, जिसे अधिरथ सूत ने पाला था। ताम्र—लाल। लोकोत्तर—असामान्य व्यक्ति।

१६. शुकनासोपदेशः

तावत्—पूर्व। कल्याणाभिनिवेशी—कल्याण का कार्य करने के लिए आग्रहशील। परिपाल्य—रक्ष्यते। वृद्ध इ०—धीरता आदि गुण-रूपी

मजबूत रस्सी के बन्धन से जकड़ी हुई भी। नश्यति—भाग जाती है, नष्ट हो जाती है। विधृता—रखी हुई। अप+क्रम्—चला जाना। न परिचयं रक्षति—परिचय की परवाह नहीं करती। अभिजन—अच्छा कुल। वैदग्ध्य—चातुर्य। अनुरुध्यते—ध्यान देती है। आद्रियते—आदर करती है (आ+दृ ४ आ०)। विशेषज्ञता—विशेष ज्ञान। अनुबुध्—जानना। गंधर्व-नगर—आकाश में दृष्टि-भ्रम से दिखायी देने वाला माया-मय नगर, मृगतृष्णा। पश्यतः एव—देखते-देखते। परिस्खलित—खिसक जाती है; चली जाती है। उदारसत्त्व—उदार-मना। अनिमित्त—बुरा शकुन। अभिजात—कुलीन। दुःस्वप्न—अशुभ स्वप्न। उपसृप्—पास जाना। अपरिचिता—परिचय की परवाह न करने वाली। निर्भरं—अच्छी तरह, दृढ़ता से। उप-गूह्—आलिंगन करना। विप्रलब्ध—ठगा गया। परिगृहीतः—अपनाया हुआ। विक्लव—दुखी। अविनयाधिष्ठानता गच्छन्ति—अशिष्टताओं के स्थान बन जाते हैं। अविनय—अशिष्ट आचरण, अशिष्टता। दृष्टिपात—देखना। उपकार इ०—उपकार करना मानते हैं। संविभाग—पुरस्कार। आ+कल्—समझना। मिथ्या इ०—झूठे बड़प्पन के अभिमान से भरे हुए। जरा इ०—बुढ़ापे में दिमाग खराब हो जाने से उत्पन्न बकवास। आत्म इ०—अपनी बुद्धि का अपमान। हितवादिने—भले की बात कहने वाले पर; कुप् धातु के साथ कोप-पात्र में चतुर्थी का प्रयोग होता है। अभिनन्द्—स्वागत करना। आप्ततां इ०—माननीय या विश्वसनीय बनाते हैं। अधिदैवतमिव—इष्टदेवता की भांति। उद्भावयति—प्रकट करता है, घोषित करता है, बढ़ाई करता रहता है।

१७. कर्णस्यौदार्यम्

नोद्यताम्—प्रेर्यताम्, बढ़ाया जाय, बढ़ाओ। महत्तरा—बहुत बड़ी। वक्ष्ये—कथयिष्यामि। परिभवति—तिरस्कार करेगा। भवतु दृष्टम्—ठीक है, समझ में आया। साध्यः—पालना चाहिए। नृप-श्रियः—राज-लक्ष्मी। हतेषु-देहेषु—शरीरों के नष्ट होने पर। ध्रियन्ते—जीवित रहते

हैं। गुणवद्—लाभकारी। अमृत-कल्प—अमृत-तुल्य। अनुयातम्—जिनके पीछे तृप्त हुए बछड़े चल रहे हैं (followed by) तरुण—युवा। अर्थि-प्रार्थनीय—जिन्हें याचक चाहते हैं। विहित इ०—सोने से मढ़े हुए सींगों वाली। मुहूर्तकं—घड़ी भर। कम्बोज—एक देश जहाँ के घोड़े प्रसिद्ध थे। सुगुण—अच्छे गुण वाले। अवदान—परिशुद्ध आचरण। सपदि—शीघ्र। सरित—बहता हुआ। निचय—समूह। विमर्द—मसलने वाला। अपर्याप्तं—असीम, असंख्य (unlimited); इस शब्द का अर्थ नाकाफी (थोड़ा) भी होता है। अग्निष्टोम—एक वैदिक यज्ञ। मच्छिरः—मत्+शिरः=अपना सिर। अविधा—बचाओ-बचाओ, हाय-हाय। देह-रक्षं—शरीर का रक्षक। भगवते—आपको। काम—इच्छा। अयुक्त—अनुचित। अनुशुच—पछताना। अलम्—रहने दो। पर्यय—बीतना। जलस्थान—जलाशय। हुतं—आहुति, यज्ञ। दत्तं—दान। निकृत्य—काटकर। अनेक इ०—ब्राह्मणों द्वारा अनेक यज्ञों की आहुतियों से तृप्त किया हुआ। सुरद्विप—देवताओं का हाथी, ऐरावत। आस्फालन—थपथपाना। कर्कश—कठोर। कृतार्थः—कृतार्थीकृतः, उपकृत किया गया (obliged)।

१८. सुभाषितानि (३)

गुर्वी—बड़ी, लम्बी (गुरु का स्त्रीलिंग)। लघ्वी—छोटी (लघु का स्त्रीलिंग)। अम्भस्—पानी। नादन्ति—न+अदन्ति=नहीं खाते हैं। विलम्बिनः—झुके हुए। प्रभंजन—तूफान। समुच्छ्रित—ऊँचे उठे हुए। कदर्थित—बुरी अवस्था में पड़े हुए। धैर्य-वृत्तेः—धैर्यशाली का। प्रमार्ष्टुम्—मिटाने को। महार्घ—बहुमूल्य। भेजिरे—प्राप्त हुए (भज् धातु) विरमन्ति—हटते हैं। अध्यवसाय-भीरोः—परिश्रम से डरने वाले का। गुण—लाभ। अर्थ—वस्तु को। अस्तमिते—अस्त होने पर (अस्तम् इते)। यदि—यद्यपि (चाहे) विष्णु ही हो। मृतः—मरे हुए के समान। नगेशः—पर्वतों का पति, हिमालय। वाससा—वस्त्र से। योग्यतया—योग्यता से। तनुजा—पुत्री, लक्ष्मी। नवमिति—नया है इसलिए। अवद्य—निन्दनीय।

अन्यतरत्—दोनों में श्रेष्ठ। पर-प्रत्यय इ०—दूसरों के भरोसे जिसकी बुद्धि चलती है, जो दूसरों के पीछे चलता है। क्षते—चोट पर। अभीक्ष्णं—निरन्तर। वर्धंति—आर्ष प्रयोग, वर्धंते; पाठान्तर दीप्यति। क्षीणाः—दुर्बल, भूखे। कृतं न मन्ये—अपने द्वारा किये हुए उपकार पर ध्यान नहीं देता। द्वाभ्यां—दो की बातों में जाकर दखल नहीं देता। छलनानुविद्धम्—छल से भरा हुआ। अर्थंकरी—लाभकारिणी। जीवलोक—संसार। महाजनः—श्रेष्ठ पुरुष (या, अधिक जनता)। संनिवर्तंते—लौटता है।

१६. भविष्णुबलि:

आबाल-पराक्रमः—बचपन से ही पराक्रमी। चापलं—चपलता नटखटपन। गत एव इ०—अपने स्वभाव पर चला ही गया। अभूमिः इ०—यह स्थान ऐसा नहीं जहां कोई अविनय करे (यह स्थान = कश्यप का आश्रम)। अनुबध्यमानः—पीछा किया जाता हुआ (followed by)। अ-बाल-सत्त्वः—न बालोचितं सत्त्वं यस्य सः। सत्त्व—बल। अर्धं इ०—जिसने माता का थन आधा ही पिया है। आमर्द—मसला जाना, कड़ी पकड़ (rough handing)। क्लिष्ट—अस्तव्यस्त (disordered)। केसर—सटा, अयाल। जृम्भ—जम्हाई लेना, मुंह फैलाना। अपत्य-निर्विशेषाणि—सन्तान के तुल्य। सत्त्व—प्राणी। स्थाने–उचित ही, ठीक ही। सर्वदमन—भरत का नाम। नामधेय—नाम; धय स्वार्थिक प्रत्यय है। (स्वार्थिक प्रत्यय उसे कहते हैं जिसके जोड़ने से अर्थ नहीं बदलता) औरस—स्वयं अपना। स्निह्यति—प्रेम करता है (स्नेह के साथ स्नेह-पात्र में सप्तमी विभक्ति आती है)। अनपत्यता—सन्तानहीनता। वत्सलयति—मुझे वत्सल बना रही है, मुझसे प्रेम कर रही है। लङ्घते—आक्रमण कर देती। पुत्रक—बच्चा। अम्महे—हो हो। बलीय—बहुत अधिक (व्यंग्य में)। सुव्रता—तपस्विनी का नाम। वर्णचित्रित:—अनेक रंगों में रंगा हुआ। उपहर—ला दे। स्पृहयामि—चाहता हूं, प्यार करने को जी करता है। दुर्ललित—नटखट। भद्रमुख—आदर का सम्बोधन, श्रीमन्। चेष्टित—चेष्टा। स्थान इ०—ऋषियों का स्थान है इस भरोसे मैंने ऐसा सोचा। कुशाङ्कुर—कुश

रूपी वृक्ष के अंकुर-रूप इस बालक के। निर्वृत्ति—सुख। कृती—धन्य। प्ररूढ़ः—उत्पन्न हुआ। रूप-संवादिनी—रूप से मेल खाती हुई। अप्रति-लोमः—अप्रतिकूल, शान्त। चेत्—यदि। व्यपदेशः—कुल-सम्बन्धी नाम (surname)। एकान्वय—समान वंश वाला। द्वितीयम्—क्योंकि शकुन्तला भी मेनका अप्सरा की पुत्री थी। व्यवहार—बातचीत, पूछताछ। शकुन्त—पक्षी। मे अम्बा—शकुन्तलावण्यं में शकुन्तला शब्द सुनकर सर्वदमन का ध्यान माँ की ओर गया। अज्जिका—दीदी, बहन। करण्डक—छोटी-सी डिबिया, जतर। मणिबन्ध—कलाई। अथ—और यदि ग्रहण करता है तो? विक्रिया—रूपान्तर। नियम इ०—तपस्या के नियमों के पालन में लगी हुई।

२०. ऋतु-वर्णनम्

प्रशान्तं—शान्त हो गया, उड़ना बन्द हो गया। सहिमः—हिमेन सहित, ठण्डा। निदाघ—गर्मी के दोषों का प्रसार बन्द हो गया। स्थिता—बंद हो गयी। उपगूढ़—भरा हुआ (उप + गुह्=आलिंगन करना)। प्रकाशः—प्रकाश-युक्त। वर्ष-प्रवेगाः—वर्षा की तेज धाराएँ। समुदीर्ण—क्षुब्ध, तीव्र। प्रनष्ट-कूलाः—जिनके किनारे टूट गये हैं। विप्रतिपन्न—अस्तव्यस्त। समाभं—समान। पृष्ठेषु—नोकों पर। विवर्णच्छदनाः—जिनके पंखों के रंग फीके पड़ गये हैं। सुरेन्द्र—इन्द्र। वहन्ति इ०—यथासंख्य अलंकार का उदाहरण (पूर्वार्ध में कई-एक क्रियाएं कही गयी हैं, उत्तरार्ध में उन्हीं क्रियाओं के कर्ता क्रम से कहे हैं)। ध्यायन्ति—सोचते हैं, चिन्तित हैं। प्लवंगमा—बंदर। वनान्ताः—जंगल। समाश्वसन्ति—आश्वस्त या सुखी होते हैं।

व्यक्तं—खुल गया है, चमक रहा है। विधौत—धुला हुआ, स्वच्छ। कह्लार—श्वेत कमल। प्रसन्न—निर्मल। स-गोकुल—गायों के झुंडों से युक्त। राव—शब्द। प्रसवः—बालें। समाक्रामति—उड़ती हैं। वाताबधूता—हवा से आन्दोलित। ग्रथिता—गुंथी हुई। नदीना—नदीनां कूलानि। कुसुम-प्रहासा—फूलों से चमकते हुए। क्षौम इ०—रेशमी वस्त्र के समान चमकते हुए। शंसन्ति—बताते करते हैं, सूचित हैं। वर्ष इ०—

वर्षा के बीते हुए काल को। परितोषयित्वा—आर्ष प्रयोग, साधारण प्रयोग परितोष्य है। प्रनष्टाः—चले गये, विलीन हो गये।

२१. कन्या-परीक्षा

द्रविडेषु—द्रविड़ देश में, जनपद-वाचक शब्द बहुवचन में प्रयुक्त होता है। अनेक इ०—अनेक करोड़ धन वाला। अष्टादश इ०—लगभग अठारह वर्ष का, देशीय प्रत्यय लगभग या प्रायः का अर्थ देता है। अननुगुण-दाराणां—न अनुगुणाः दाराः येषां तेषां, जिनकी स्त्रियाँ उपयुक्त गुणों वाली नहीं है उनको। विन्देयं—पाऊँ, (विन्द्=पाना) परप्रत्यया-हृतेषु—दूसरों के विश्वास पर लायी गयी (ब्याही गयी)। यादृच्छिकी—अभीष्ट। संपत्ति—गुणों की संपत्ति। कार्तान्तिक—ज्योतिषी। वस्त्रान्त इ०—वस्त्र के छोर में प्रस्थ भर चावल बाँधकर। लक्षणज्ञ—सामुद्रिक विद्या का ज्ञाता। लक्षणवती—अच्छे लक्षणों वाली। गुणवन्तम् अभ्यवहारयितुं—बढ़िया भोजन कराना (अभ्यवहृ—भोजन करना)। हसितावधूतः—हँसा जाता और तिरस्कार किया जाता हुआ। शिबिषु—शिबि देश में। अवसित-महर्धि—माता-पिता के साथ ही जिनकी महान् संपत्ति भी समाप्त हो गयी थी। अपशीर्ण इ०—जिसके घर की समृद्धि (शोभा) नष्ट हो गयी थी। संसक्त-चक्षुः—दृष्टि जम गयी। विकट—बेडौल, भद्दे। मृजावन्तः—साफ-सुथरे। सा इयम् इ०—ऐसा यह रूप सदाचार से रहित नहीं हो सकता। उद्वह्—ब्याहना। नियतं—निश्चय। अनुशय-परम्पराः—पश्चाताप पर पश्चात्ताप। स्निग्धदृष्टि—स्नेहपूर्वक देखता हुआ। साकूतं—विशेष अभिप्राय के साथ। अलिन्द—चबूतरा। उद्देश—स्थान। सिक्त—पानी छिड़के हुए। संमृष्ट—बुहारे हुए। दत्त इ०—पैर धोने को पानी देकर। उपावेशयत्—उप+आ+विश् (प्रेरणार्थक), बिठा दिया।

गंधशालीन्—सुगंधित चावलों को। संक्षुद्य—कूटकर। एभिः इ०—गहनों की सफाई कर सकने वाले इन तुषों की आवश्यकता सुनारों को होती है। दत्त्वा—देकर, बेचकर। काकिणी—कौड़ी, कौड़ियों का छोटे सिक्कों की भाँति प्रयोग होता था। स्थिर-तर—भारी। मितंपचा—थोड़ा

अन्न पकाने वाली, छोटी। स्थाली--हांडी। शराव—सरवा, सकोरा। आहर—ले आ। उद्धृत्य—उठा-उठाकर। अवहत्य--कूटकर। शूर्प इ०--सूप से किनकों और तिनकों को साफ करके। असकृद्—बारबार। अद्भिः—पानी से, अप् = जल, इसका प्रयोग बहुवचन में ही होता है। क्वथित—उबले हुए। दत्त इ०--(दानों से) चूल्हे की पूजा करके। प्राक्षिपत्--डाल दिया। प्रचलथ् इ०—चलने पर। स्फुरत्सु—फरफरे होने पर। मुकुलावस्थां—खिल जाना। संक्षिप्य—कम करके। उपहित—जिसके ऊपर ढक्कन ढका था। अन्नमण्ड—अन्न की माँड। अगालयत्—पसाया। दर्वी--कलछी। अवघट्य—मलाकर। समपक्वेषु--एकसा पक जाने पर। सिक्थ—चावल। प्रतिष्ठिपत्—अस्थापयत्, रख दी।

अन्तःसाराणि--अधजली। अभ्युक्ष्य--पानी से बुझाकर, सम्+अभि+उक्ष्+य। प्रशमिताग्नि--बुझा हुआ। कृष्णाङ्गारीकृत्य—कोयले बनाकर। प्राहिणोत्—भेजा, प्र+हि। आमलक--आँवला। चिञ्चाफल—इमली। यथालाभं—जितना मिले।

द्वित्रान्—दो-तीन। उपदेश—शाकादि, उपायण। उपपाद्य—तैयार करके। उपहित--ऊपर रखे हुए। ताल इ०—ताड़ के पंखे की हवा से। स-लवण-संचारं—नमक मिलाकर। दत्ताङ्गार इ०—छौंक लगाकर। संपाद्य—बनाकर। श्लक्ष्णपिष्ठ—महीन पिसा हुआ। अनोदयत्—कहलाया (नुद्—प्रेरणा) करना।

सिक्त-मृष्टे—जल छिड़के हुए और बुहारे हुए। कुट्टिम—आंगन, फर्श। फलक—चौकी, पाटा। पेया—पीने की वस्तु। समुपाहरत—लायी, लाकर आगे रखा। अध्वक्लम—मार्ग की थकावट। शाल्योदन—चावलों का भात। सर्पिर्मात्रां—घी की (थोड़ी-सी) मात्रा। सूप—दाल। उपजहार—लायी। त्रि-जातक—सोंठ, मिर्च, पीपल। कालशेय—मट्ठा। कंजिका—काँजी। अभोजयत्—खिलाया। सशेष एव—बाकी रहते ही, समाप्त होने के पूर्व ही। अन्धस्—अन्न। नव इ०—नये पात्र में भरा हुआ। नाली—टोंटी से धार बाँधकर। आकण्ठं—गले तक, पेट भरकर। संज्ञा—इशारा। अपकरक—करवा; जल-पात्र। अदत्त—दिया।

अपोह्य—दूर करके। हरित—हरा अर्थात् ताजा। स्वं—अपना। व्यवसाय—बिछाकर। अशेत—सोया। उपयम्य—विवाह करके। निन्ये—(घर) ले गया

२२. सुभाषितानि (४)

समाविशतु—आवे (सम्+आ+विश्)। न्याय्य—न्याययुक्त। पदं—एक पैर भी। प्रारब्धं—आरम्भ किये हुए को। चक्रवालं—समूह। अनभ्यर्थितः—बिना माँगे। कृताभियोगाः—लगनशील, उद्यमशील। तनोति—देती है। वितनोति—फैलाती है। दिशति—दिखाती है, करती है, देती है। भास्वान्—सूर्य। कोष—कमल का कोष। द्विरेफ—भ्रमर (भ्रमर शब्द में दो रेफ या रकार होते हैं)। कार्य-जातम्—कार्य-समूह। परिणति—परिणाम। अवधार्या—सोच लेना चाहिए। रभस—शीघ्रता। विपाकः—परिणाम। वृत्ति—रहन-सहन या स्वभाव। असुभंगे—प्राण-नाश होने पर भी। अ-सुकर—दुष्कर। उच्चैः—ऊँचा होकर। अनुविधेयं—अनुसरण करना। उद्दिष्टं—बताया, सिखाया। संभ्रम—आदर। अनुत्सेक—गर्व न होना। उपकृति—उपकार। निरभिमतसाराः इ०—दूसरों के विषय में बातचीत बनावट से रहित होती है। कन्था—गुदड़ी। कार्यार्थी—जो कार्य को सिद्ध करना चाहता है। वहकाः—(परहित) करने वाले। अमी—ये। उपशम—शान्ति। पात्र—योग्य व्यक्ति। निर्व्याजता—अकपटता, निश्छलता। सर्वकारण—सबका साधन।

२३. अनुशासनम्

अनुशासनं—अनु (अध्यापनान्तर) शासनं (उपदेशः)। अनूच्य—(अनु+वच्+ल्यप्)—अध्याप्य, पढ़ाकर। आचार्यः—

उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद् द्विजः।
स-कल्पं स-रहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते॥

अन्तेवासिनं—गुरोः अन्ते समीपे वसति इति तं, शिष्यं। चर—आचरण करो, पालन करो। स्वाध्यायात्—(वेदों के) अध्ययन

प्रमाद मत करो, अध्ययन को मत भुलाओ। प्रमदः—सामान्य भूत, आज्ञा के अर्थ में मां के साथ सामान्य भूत का प्रयोग होता है जिसके पूर्व अकार का लोप हो जाता है। प्रिय—अभीष्ट। आहृत्य—आ+हृ+ल्यप् (ऋकारान्त धातुओं में ल्यप् जुड़ने के पूर्व त् का आगम होता है)—लाकर, दक्षिणास्वरूप देकर। प्रजातन्तुं मा इ०—सन्तान के क्रम को मत तोड़ो, वंश-परम्परा को नष्ट मत करो, विवाह करो और सन्तान उत्पन्न करो। प्रवचन—अध्यापन। भूत्यै—उन्नति या कल्याण के विषय में। देव-कार्य—देवयज्ञ, देवपूजा। पितृ-कार्य—पितृयज्ञ, तर्पणादि। मातृदेवो—माता देवः यस्य सः, माता को देवता समझो। अनवद्य—वद्य=प्रशंसनीय, अवद्य=निन्दनीय, अनवद्य=अनिन्दनीय, अदुष्ट। सेवितव्यानि—करणीयानि, करना चाहिए। नो—न, नहीं। इतराणि—दूसरे, जो अनिन्दनीय नहीं ऐसे। उपास्यानि—आचरणीयानि। ये के—जो कोई। अस्मत् श्रेयांसः—हमसे श्रेष्ठ। ब्राह्मणाः—विद्वान्। प्रश्वसितव्यम्—विश्राम देना चाहिए, श्रम दूर करना चाहिए। आसनेन—आसन आदि देकर।

श्रद्धया—श्रद्धा के साथ। देयं—दान करना चाहिए, दान करो। श्रिया—उदारता-पूर्वक। ह्रिया—लज्जा या संकोच के साथ। भिया—शास्त्र और लोक के भय से। संविदा—प्रेम के साथ (या बुद्धिपूर्वक, समझकर)। अथ—और। विचिकित्सा—सन्देह। वृत्त—आचरण। संमर्शिनः—विचारशील। वर्तेथाः—व्यवहार करना। उपनिषत्—रहस्य, उपनिषत् शब्द नारीजातीय है। उपासितव्यम् उपास्यम्—आचरण करने योग्य। एवमु—=एवम्+उ; उ—और; पुनरावृत्ति समाप्ति-सूचनार्थ की गयी है।

वि०—इस अंश की भाषा साधारण संस्कृत भाषा से कुछ पुरानी है।

२४. चरैवेति

चरैवेति—चर एव इति, चलते ही रहो।

अनाश्रान्ताय--अन्+आश्रान्ताय--जो श्रम से नहीं थकता (जो श्रम नहीं करता) उसके लिए। रोहित—हरिश्चन्द्र का पुत्र रोहिताश्व। शुश्रुम:--प्राचीन काल से सुनते आये हैं। पापः—पापी। नृषद्--लोगों में बैठा रहने वाला, आलसी। वरः—श्रेष्ठ; श्रेष्ठ पुरुष भी बैठा रहे (परिश्रम न करे) तो पापी होता है। इत्—अवश्य ही। पुष्पिण्यौ—फलती-फूलती। भूष्णु—होनहार, बढ़ने वाला। फलग्रहिः—फलवान्, सफल, स्वस्थ। शेरे—शेरते, सोते हैं। पाप्मानः—पाप। प्रपथे—लम्बे मार्ग में, लम्बी यात्रा में आस्ते—बैठा रहता है। भग—ऐश्वर्य, समृद्धि (ऐश्वर्यस्य समस्तस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः। ज्ञान-वैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीरणा)। निषद्यमानस्य--पड़े रहने वाले का। चराति—चरति, चलता है, आगे बढ़ता है। शयानः—सोया हुआ। संजिहान—बिछौना छोड़ने वाला, निद्रा त्यागने वाला। कृतं—सत्ययुग। संपद्यते—होता है। (चतस्रः पुरुषस्य अवस्थाः—निद्रा, निद्रा-परित्यागः, उत्थानं, संचरणं च; ताश्च उत्तरोत्तर-श्रेष्ठत्वात् कृतादिभिर्युगैः समानाः)।

विन्दति—पीता है। मधु—जीवन का आनन्द। उदुम्बर—एक फल, जीवन का फल। श्रेमाणः—श्रेष्ठत्व, शान, सौन्दर्य (glory) (श्र+इमन्; श्र=अच्छा; मिलाओ श्र+ईयस्=श्रेयस् श्र+इष्ठ=श्रेष्ठ)। तंद्रयते—तंद्रा (आलस्य) करता है।

टि०—इस गीत की भाषा भी प्राचीनतर है।

२५. मङ्गलम्

न्याय्य—न्याय-युक्त। ब्राह्मण—ब्राह्मणों का अभिप्राय विद्वानों से है। काले—उचित समय पर। पर्जन्य—मेघ। सस्य या शस्य—धान्य, अनाज। क्षोभ—अशान्ति। क्षीरिण्यः—दूध देने वाली। जन्मभाजः—जन्म लेने वाले, प्राणी। अभिमताः—आदरणीय, पूजनीय। प्रशमित-रिपव.—जिनके शत्रु नष्ट हो गये हैं। निरामयाः—रोगरहित। भद्र—कल्याण। भाक्—भागी। दुर्ग—संकट।

संस्कृत-विहारः



नरोत्तमदास स्वामी, एम. ए.

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा

मूल्य : रु. २·६५